जापान भारती

अंक ९/१० विक्रम संवत् २०५२ नवंबर/दिसंबर

संपादक

सौरभ सिंघल

संपादक मंडल

अखिल मित्तल

রঞ্জন গুপ্ত (रंजन गुप्त)

रंजन कुमार

सुशील कुमार जैन

पता

5-12-9 दाईसान एबातो बिल्डिंग,
उएनो ताइतो कू,
तोक्यो 110

फोन/फैक्स

03-3832-1631/3832-1641

फोन//फैक्स

सौरभ : 03-3462-0853

रंजन कुमार : 03-3473-6043

ranjan@twics.com

इस अंक में

हमारा पन्ना 2

आपका पन्ना 2

अनुभव - आ अब लौट चलें..3

ऐसा क्यों 4

संस्कृति - प्रार्थना के मन्त्र...5

संकटमोचन 6

चाँद की चाँदनी..9

भाषा चर्चा 10

कहानी - अंकल जी.....13

काव्यधारा 16

रसोई 18

बचपन 19

निवेदन 20

টোকিওতে পূজো ... 20

একটা পুতুলের গল্প ...21

ভারতে এক মাস ...22

আলুর পিৎসা ...23

খাদক - সেকাল ...24

इस वर्ष में जापान भारती का यह अंतिम अंक आपके हाथ में है। इस बार भी यह संयुक्तांक ही है। नए वर्ष में मासिक निरन्तरता का सँकल्प है और इस सँकल्प के यथासम्भव निर्वहन की भरसक चेष्टा भी रहेगी। अपने उद्देश्य के अनुरुप भाषा और सँस्कृति पर कुछ विशेष सामग्री इस अंक में भी संजोई है।

१९९५ के इस अंतिम आयोजन में भारतीय साहित्य और कला संसार की उन तमाम विभूतियों को विनम्र श्रद्धांजलि जिन्हें काल के क्रूर हाथ हम से छीन ले गए।

नया वर्ष काल के द्वार पर दस्तक दे रहा है। आप सबके साथ हमने भी उसके स्वागत में कुछ तैयारी की है। अगले अंक में बाल विशेषांक के अन्तर्गत कुछ चुनी हुई रचनाएँ आप तक पहुँचाने की योजना है। आशा है आप पसंद करेंगे। आने वाला वर्ष सबके लिए सुखकर हो, यही कामना है।

सौरभ सिंघल

प्रिय सौरभ,

जापान भारती के सभी छः अंक मिले। हर अंक उत्कृष्ट एवं पिछले से बेहतर। इस अल्पावधि में ही **जापान भारती** मात्र एक पत्रिका नहीं वरन् एक भावना, एक विचार का मूर्त्तरूप बन गई है। इस सद्प्रयास, इस सफल प्रयास के लिये तुम एवं समस्त सम्पादक मंडल बधाई के पात्र हो। मेरी प्रार्थना है **जापान-भारती** की यह यश–यात्रा अनवरत जारी रहे।

पत्र लिखने में देरी हुई इसका मुझे खेद है। वस्तुतः **जापान-भारती** का हर अंक तुम्हें पत्र लिखने को प्रेरित करता आता। पत्र लिख नहीं पाया क्योंकि तुम्हारा सद्प्रयास कोरी पत्र की औपचारिकता नहीं वरन् रचनात्मक सहयोग का अधिकारी है। उपयुक्त लेख न लिख पाना ही इस देरी का कारण है। अब एक रचना भेज रहा हूँ।

भारत में आजकल उत्सवों का मौसम है। पहले रक्षा बंधन फिर कृष्ण जन्माष्टमी, अब दशहरा फिर दीपावली। विजयदशमी एवं दीपावली के पौराणिक संदर्भ में श्री हनुमान का एक विशेष महत्व है। आशा है लेख पसंद आयेगा।

एक बार पुनः हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

डा.सुन्दरलाल,
गणित विभाग,आगरा विश्वविद्यालय, आगरा।

जापान भारती के सभी अंक मिलते रहे हैं। आपके सौजन्य के प्रति कृतज्ञ हूँ। धन्यवाद के औपचारिक शब्द से मैं आपके उस कर्तृत्व के प्रति अपना आभार नहीं कर सकी जो आप भारत–जापान के संबंधों के लिए कर रहे हैं। वस्तुतः यह शब्द इस महत कार्य के लिए बहुत छोटा है।

जापानी विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाते हुए मैं दोनों देशों के बीच मधुर संबंध से अवगत होती रही हूँ और आपकी इस सुरुचिपूर्ण पत्रिका से इस संबंध के प्रति आश्वस्त हो गई हूँ। अपने इस सर्जनात्मक उपक्रम के लिए मेरा साधुवाद स्वीकार करें।

मेरी माँ श्रीमती शान्ति श्रीवास्तव बहुत मुग्ध हैं **जापान भारती** और जापान दोनों से। अतः उनकी कविता जापान **जापान भारती** के लिए भेज रही हूँ। सद्भाव सहित,

प्रोफेसर मीरा श्रीवास्तव,
तोक्यो विदेशी अध्ययन विश्वविद्यालय,तोक्यो

इस वर्ष में जापान भारती का यह अंतिम अंक आपके हाथ में है। इस बार भी यह संयुक्तांक ही है। नए वर्ष में मासिक निरन्तरता का सँकल्प है और इस सँकल्प के यथासम्भव निर्वहन की भरसक चेष्टा भी रहेगी। अपने उद्देश्य के अनुरूप भाषा और सँस्कृति पर कुछ विशेष सामग्री इस अंक में भी संजोई है।

१९९५ के इस अंतिम आयोजन में भारतीय साहित्य और कला संसार की उन तमाम विभूतियों को विनम्र श्रद्धांजलि जिन्हें काल के क्रूर हाथ हम से छीन ले गए।

नया वर्ष काल के द्वार पर दस्तक दे रहा है। आप सबके साथ हमने भी उसके स्वागत में कुछ तैयारी की है। अगले अंक में बाल विशेषांक के अन्तर्गत कुछ चुनी हुई रचनाएँ आप तक पहुँचाने की योजना है। आशा है आप पसंद करेंगे। आने वाला वर्ष सबके लिए सुखकर हो, यही कामना है।

सौरभ सिंघल

प्रिय सौरभ,

जापान भारती के सभी छः अंक मिले। हर अंक उत्कृष्ट एवं पिछले से बेहतर। इस अल्पावधि में ही **जापान भारती** मात्र एक पत्रिका नहीं वरन् एक भावना, एक विचार का मूर्त्तरूप बन गई है। इस सद्प्रयास, इस सफल प्रयास के लिये तुम एवं समस्त सम्पादक मंडल बधाई के पात्र हो। मेरी प्रार्थना है **जापान-भारती** की यह यश–यात्रा अनवरत जारी रहे।

पत्र लिखने में देरी हुई इसका मुझे खेद है। वस्तुतः **जापान-भारती** का हर अंक तुम्हें पत्र लिखने को प्रेरित करता आता। पत्र लिख नहीं पाया क्योंकि तुम्हारा सद्प्रयास कोरी पत्र की औपचारिकता नहीं वरन् रचनात्मक सहयोग का अधिकारी है। उपयुक्त लेख न लिख पाना ही इस देरी का कारण है। अब एक रचना भेज रहा हूँ।

भारत में आजकल उत्सवों का मौसम है। पहले रक्षा बंधन फिर कृष्ण जन्माष्टमी, अब दशहरा फिर दीपावली। विजयदशमी एवं दीपावली के पौराणिक संदर्भ में श्री हनुमान का एक विशेष महत्व है। आशा है लेख पसंद आयेगा।

एक बार पुनः हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

डा.सुन्दरलाल,
गणित विभाग,आगरा विश्वविद्यालय, आगरा।

जापान भारती के सभी अंक मिलते रहे हैं। आपके सौजन्य के प्रति कृतज्ञ हूँ। धन्यवाद के औपचारिक शब्द से मैं आपके उस कर्तृत्व के प्रति अपना आभार नहीं कर सकी जो आप भारत–जापान के संबंधों के लिए कर रहे हैं। वस्तुतः यह शब्द इस महत कार्य के लिए बहुत छोटा है।

जापानी विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाते हुए मैं दोनों देशों के बीच मधुर संबंध से अवगत होती रही हूँ और आपकी इस सुरुचिपूर्ण पत्रिका से इस संबंध के प्रति आश्वस्त हो गई हूँ। अपने इस सर्जनात्मक उपक्रम के लिए मेरा साधुवाद स्वीकार करें।

मेरी माँ श्रीमती शान्ति श्रीवास्तव बहुत मुग्ध हैं **जापान भारती** और जापान दोनों से। अतः उनकी कविता जापान **जापान भारती** के लिए भेज रही हूँ। सद्भाव सहित,

प्रोफेसर मीरा श्रीवास्तव,
तोक्यो विदेशी अध्ययन विश्वविद्यालय,तोक्यो

आ अब लौट चलें...

सच कहा है किसी ने समय के पंख होते हैं। तीन बरस पहले मन में अनेक आशंकाएँ लिए जापान आया था तब यही लगता था कि कैसे कटेंगे यह तीन बरस। पर कटे और कुछ बुरे भी नहीं कटे। नया देश–नया वेश,नई दुनिया–नई रीत बहुत कुछ जाना–समझा। उगते सूरज की इस धरती ने बहुत कुछ नया सिखाया तो कुछ निराश भी किया। पर आस–निरास का यह क्रम तो जीवन के साथ लगा ही हुआ है। अब कुछ नए संबंध, कुछ स्मृतियां लिए लौटने की घड़ियां निकट हैं।

मन में बहुत कुछ है कहने सुनने को। पर इतना तो कहना ही होगा कि जहाँ जापानी तमाम आधुनिकता के बावजूद हर पल अपनी जड़ों से जुड़े दिखते हैं वहीं हम भारतीय अपनी पहचान खो देने को ही आधुनिकता का पर्याय मान बैठे हैं। जापान में हर देश के लोगों का अपना–अपना समुदाय दिखता है। पर भारतीय समुदाय शायद आदतन एक पहचान में यकीन नहीं रखता।

सरस्वती पूजा और दुर्गा पूजा जैसे आयोजन ही भारत की रस–गंध से जापानी वायुमण्डल को सुगन्धित करने में प्राणपण से जुटे हैं। इन आयोजनों में जाकर जहाँ भारतीय सँस्कार के राजीव दर्शन किए वहीं दीवाली मेले ने तो समस्त ज्ञान चक्षु आलोकित कर दिए। कानफाड़ू फिल्मी धुनों से माँ लक्ष्मी और विध्नविनाशी गणपति का आह्वान और फिर रैफल–रैफल के स्वरनाद में आरती ने भारतीय सँस्कृति के एकदम नए रूप के दर्शन कराए।

मन में कुछ कसमसाहट हुई फिर किसी कोने से आवाज़ आई, मूर्ख! यह घपोड़शंखी सोच छोड़कर बाहर निकल यह लिबरलाइजेशन का दौर है। तब सोचने लगा दुर्गा सप्तशती के रचनाकार को एक श्लोक और रचना चाहिए—

’या देवी सर्वभूतेषु रैफल रूपेण सँस्थित:,
नमस्तस्यै,नमस्तस्यै नमो नम: ।‘

इस बीच जापान भारती से जुड़ाव कुछ सार्थकता का अहसास दिलाता रहा। यह दीपशिखा अनवरत् प्रज्वल्लित रखने के लिए सदा मनसा वाचा कर्मणा समर्पित रहने के सँकल्प के साथ ही

चल पथिक अब लौट चल घर, उठा डेरा,
बाँध गठरी स्मृति की औ़र खाली कर बसेरा।

-अखिल मित्तल

जापान

सर्वगुणसम्पन्न रूपसी–सी धरा
जापान की है।।
अतुलनीय, सुहासिनी सी,
सुघर कोमल कामिनी सी।
भाल बिन्दु सुहागिनी सी,
शरदऋतु की चाँदनी सी।।
लग रही सबको परम प्रिय, यह
धरा जापान की है।।
हरित है परिधान इसका,
सुमन ही शृंगार इसका।
मधुर सलिल सुस्वाद इसका,
स्वयंलीन स्वभाव इसका।।
लघु नयन नर–नारि के, चितवन
नुकीले वाण सम हैं।।
जगमगाते हैं सितारे,
अर्धनिशि में ज्यों गगन में,
ज्योति विद्युत हर किनारे,
चमचमाती पंक्तियों में।।
दिवस के अवसान का आभास
होता ही नहीं है।।
गिरि सुरक्षा कर रहे हैं,
बन सहोदर औ सखा सम।
संग संग रहती प्रकृति है,
सतत बचपन की सखी सम।।
मंदिरों में धर्म बसता, यह प्रथा
जापान की है।।
किन्तु सुंदरता बसी है,
गेह निज का ही समझकर।
सो रही सुख नींद से है,
गुदगुदाते स्वप्न आकर।।
मोहिनी अनुपम छटा, क्योतो नगर
जापान की है।।

-शांति श्रीवास्तव,
द्वारा प्रोफेसर मीरा श्रीवास्तव,तोक्यो

" ऐसा क्यों ? "

जापान आए हुए अभी कुछ ही दिन हुए हैं। अपने देश से तो खैर काफी भिन्न है यह देश, तौर तरीकों, खान–पान और भी अन्य कई मामलों में। उगते सूरज की किरणों से दैदीप्यमान होने वाले इस छोटे से देश की असीम प्रगति ने सिद्ध कर दिया है कि मनुष्य अपने परिश्रम, लगन और विश्वास से अपरिमित उन्नति कर सकता है।

जापानियों की मृदुभाषिता और कार्यनिष्ठा सदा से ही मुग्ध करती आई है। भारतीय सभ्यता, सँस्कृति के प्रति इनकी उत्सुकता और उत्कण्ठा हमेशा से ही रही है। अक्सर ऐसे जापानियों से मुलाकात होती है जो कि पूछते हैं नटराज, गणेश और विष्णु आदि के बारे में। और कई बार उत्तर देते हुए यह जानकर सुखद आश्चर्य होता है कि कई जापानी काफी जानकारी रखते हैं भारतीय सभ्यता और संस्कृति के बारे में, तथा काफी लगाव महसूस करते हैं।

एक घटना का परिचय दूँ। मुझे आये हुए एक सप्ताह हुआ था। एक दिन सुबह कहीं जा रही थी कि अचानक लगा, पीछे से किसी ने कुछ कहा। मुड़ कर देखा तो एक जापानी लड़की कुछ कह रही थी मुझसे। मैंने 'गोमेन नासाई, निहोंगो वाकारिमासेन' कहते हुए जापानी भाषा न समझने की असमर्थता व्यक्त की। 'निहोंगो वाकारिमासेन' अब तक मेरा तकिया कलाम बन चुका था। आगे बढ़ी ही थी कि कानों से कुछ जाने–पहचाने शब्द टकराये। कदम थमे, और मुड़ कर ध्यान दिया तो सुना कि वह हिन्दी में मुझसे पूछ रही है, "आप क्या भारत से आई हैं?"

अचरज हुआ, उत्सुकता बढ़ी। फिर तो बातचीत का सिलसिला बढ़ा और कड़ियाँ जुड़ती गईं। पता चला नाम है योको सानू। और, यहाँ जापान में छुट्टियाँ बिताने आई हैं। छुट्टियाँ बिताने, क्या मतलब? मैंने पूछा। तो पता चला कि योको सानू भारत में कत्थक सीखती हैं। दो महीने के अवकाश में यहाँ आई हैं।

पूछा कि कैसा लग रहा है इण्डिया? उत्तर में पहला वाक्य था "भारत को इन दो महीनों में बहुत 'मिस' किया। मैं जल्दी से जल्दी वापस जाना चाहती हूं।" मैंने हर्षमिश्रित उतावलेपन में पूछा, "इतना अच्छा लगता है हमारा भारत, ऐसा क्या है हमारे इण्डिया में।" जवाब मिला क्या नहीं है, "एक ऐसा आकर्षण है जो कि बाँध लेता है। ऐसी संस्कृति जिसमें जितनी गहराई में जाओ, उतना ही पाओ। ऐसा अध्यात्म जो कि मन को शान्त करता है। ऋषि–मनीषियों की भूमि से ऐसी प्रेरणा जो सत्पथ, कर्मपथ पर अग्रसर होने को प्रेरित करती है। प्रकृति का ऐसा रूप जो कि सम्मोहित करता है।"

मेरे मन में गर्व का सागर उत्ताल तरंगों के साथ लहरा रहा था। पर कुछ शकाएं भी उठ रही थीं, इसी मन के किसी कोने में। और कुछ झिझकते हुए मैंने पूछ ही लिया "वहां की धूल, मिट्टी, गन्दगी से परेशानी नहीं होती?" स्पष्ट उत्तर था "परेशानी तो होती है पर ये सब तुच्छ और नगण्य हैं मेरे लिए इण्डियन कला और सँस्कृति के समक्ष"। मैं स्तम्भित थी उनसे बात–चीत करके। भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रति रुझान देखकर। बीच में उन्होंने क्षमा माँगते हुए कहा कि हिन्दी शायद उनकी इतनी शुद्ध नहीं है, शायद व्याकरण सम्बन्धी भूलें भी होती हैं उनके हिन्दी बोलने में। अनुनय था उनका मुझसे, बातचीत के दौरान होती हिन्दी की भूलों और व्याकरण को सुधारने का। मन ही मन मैं तुलना कर रही थी, योको सानू की उन लोगों से जो भारतीय होकर, शुद्ध हिन्दी जानते हुए भी बोलने में अपनी हेठी समझते हैं और तोड़–मरोड़ कर बोलने में गर्व। भारतीय सभ्यता, सँस्कृति के बारे में उत्सुकता रखने की अपेक्षाकृत कन्धे उचका देने को ही श्रेयस्कर समझते हैं। अपनी सँस्कृति के प्रति उदासीनता प्रदर्शन करने में ही आधुनिकता और विकास मानते हैं। ऐसा क्यों? यथार्थ तो इसके विपरीत है। सर्वांगीण विकास अपनी जड़ों से जुड़े रहने पर ही सम्भव है, कटने पर नहीं। क्या यह सच नहीं??

–सुरभि गर्ग

ईश्वर प्रार्थना और प्रार्थना के कतिपय मन्त्र - डॉ. शारदा आर्य

सांसारिक मनुष्य अनिष्ट के निवारण एवं इष्टपूर्ति के लिए नित्य प्रति अपने इष्ट देव की स्तुति करता है। मनसा-वाचा-कर्मणा किसी भी प्रकार अपने प्रभु का ध्यान करता है। कोई मन्दिर जाता है या कोई मस्जिद या कोई गिरिजाघर। इस प्रकार सब ही अपने-अपने धर्म के अनुसार प्रार्थना करते है और इस प्रकार प्रसन्नता का अनुभव करते है। प्रार्थना अथवा ईश्वर स्तुति के बल पर अगम्य वाम्यसिध्दि की आकाक्षा की जाती है और सिध्दि भी प्राप्त होती है। कहा भी जाता है जो रोग दवा से साध्य नहीं है वह दुआ से ही संभव है। प्रार्थना ईश्वर स्तुति में श्रध्दा अत्यन्त आवश्यक अंग है। श्रद्धालु ह्रदय अपने सच्चे प्रेम से अपने इष्ट देव को प्रसन्न करने में समर्थ होता है। श्रद्धा एक ऐसा पुष्प है जो मनुष्य को ईश्वर का कृपा-पात्र बना देता है। वेदों में श्रध्दा के विषय में कहा गया है-

श्रध्दा से यज्ञाग्नि प्रदीप्त की जाती है, श्रध्दा से ही यज्ञ सामग्री अग्नि में अर्पित की जाती है (देवताओं का आह्वान किया जाता है) और हम ऐश्वर्य के मूलस्त्रोत में भी श्रद्धा को वाणी के माध्यम से जान पाते है। अतः श्रद्धा जीवन की प्रगति और उन्नति के लिए अत्यावश्यक है। श्रद्धा मन अथवा अन्तःकरण की शुध्दि का प्रमुख साधन है

अन्तःकरण मनुष्य के भाव अथवा भावनाओं को ही द्योतित करता है। जिसकी भावना जैसी होती है प्रभु-मूरत वैसी ही दिखाई देती है। "भावः सर्वत्र कारणम" एंव "भावसाध्यः स्वयं देवः" आदि प्रसंग हमारे प्राचीन शास्त्रों में अनेक स्थलों पर पुनरुक्ति भाव से प्रस्तुत किए गए है।

नाम-जप एवं मन्त्र-जप भावशुद्धि अथवा प्रार्थना के मुख्य अंग है। भावना सकाम हो या निष्काम ईश्वर या इष्टदेव स्तुत्य है। वास्तव में मनुष्य भगवान की स्तुति उसे रिझाने के लिए नहीं करता परन्तु भगवान की वस्तु उसे ही समर्पित है- इस "तदर्पण बुद्धि" से भक्त उसके सम्मुख अपनी भावनाओं को रखता है। ऋग्वेद में एक स्थल पर कहा गया है- जैसे चरवाहा जिन पशुपतियों के पशुओं को चराने के लिए ले जाता है और सायंकाल आकर उन्हें ही उनके पशु फिर से समर्पित कर देता है उसी प्रकार मनुष्य को भी भगवान की स्तुति करनी चाहिए। अर्थात उस परमेश्वर ने जो जो अच्छी बातें हमे प्रदान की है उनका ही वर्णन उस प्रभु के सामने कर देना चाहिए। अन्ततः सब कुछ उस की ही देन है।

वेद में भी एक अन्य स्थल पर भक्त ईश्वर से प्रार्थना करता है कि "हम लोगों को मन की प्रसन्नता एवं सुख प्राप्त हो और हे पिता ! जो तुम्हारी सर्वाधिक सुखदायिनी एवं कल्याण ऐश्वर्य प्रदान करने वाली कृपाबुद्धि है या कृपादृष्टि है उसे हम अपने लिए वरण करते है।" यह भावशुद्धि का अत्यन्त प्रभावोत्पादक मन्त्र है।

भारतीय वैदिक परम्परा में कुछ वैदिक मन्त्र प्रार्थना या ईश्वर स्तुति के लिए उल्लेखनीय है।

समस्त प्रार्थना मंन्त्रों के आरम्भ में "ओम्" का उच्चारण वैदिक परम्परागत है। पद्मपुराण में एक स्थल पर स्पष्ट रुप से कहा गया है-

ओंकारः प्रणवो ब्रम्ह सर्वमन्येषु नायकः।
आदा सर्वत्र युज्जात मन्त्राणा च शुभानन।।

प्रणव ब्रम्ह ही है। समस्त मन्त्रों के आरम्भ में सर्वप्रथम ओंकार का उच्चारण करना चाहिए।

भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में गायत्री मन्त्र का जप मुख्यतम है। यथार्थ रूप से हिन्दू धर्म का पालन करने वाले प्रत्येक श्रध्दालु अथवा साधक को शैशव काल से ही गायत्री मन्त्र के जप की शिक्षा दी जाती है। मन्त्र इस प्रकार है-

ओम् भूर्भुवः स्वः
तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि
धियो यो नः प्रचोदयात्।

यजुर्वेद का यह मन्त्र ईश्वर का चिन्तन एवं मनन करने में सर्वाधिक शक्तिशाली है। इस मन्त्र का आशय है- सृष्टिकर्ता, पालनकर्ता एवं संहारकर्ता परमात्मा इस भूलोक अन्तरिक्ष लोक एवं द्युलोक अथवा वर्तमान, भविष्य, एवं भूत काल में जो कुछ भी है, होगा, तथा हुआ है, वह सब उस चरम प्रेरक तेजस्वी सविता के ही वरणीय तेज का प्रभाव है। हम उस प्रेरक देव सविता के तेज को धारण करते है। अथवा उसका ऐसा तेज हमारी बुद्धियों

अथवा कर्मों को भली प्रकार या सुन्दर रुप से प्रेरित करे अथवा देव ही हमारी बुध्दियों को सन्मार्ग पर प्रेरित करे। सन्मार्गगामी लोगों को उसका तेज अपने अन्दर धारण करना चाहिए। अथवा उन्हें भी उसके सदृश ही तेजोमय बनने का सतत प्रयास करना चाहिए।

इसी प्रकार साधक एक अन्य मंन्त्र द्वारा स्वयं को पवित्र करने की कामना करता है। मन्त्र निम्न प्रकार से है-

पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः। पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा।।

अर्थात प्रत्येक उत्पन्न वस्तु में विद्यमान है जातवेद। (चैतन्य रुप ब्रम्ह) आप मुझे पवित्र करें। तथा आपकी समस्त दिव्य-शक्तियां मुझे पवित्र करे। वे ही हमारे मन से या चिन्तन से हमारे कर्म या बुध्दियों को भी पवित्र करे। यही नही वे समस्त प्राणियों को भी पवित्र करें।

यज्ञ की अग्नि प्रज्वलित होने पर साधक निम्न वैदिक मन्त्र से अग्नि की स्तुति करता है-

ओम् अग्नेनय सुपथा राये अस्मान्
विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो
भूविष्ठां ते नम उक्ति विधेम।।

अर्थात "हे अग्नि देव। हमें भौतिक सुख समृध्दि के लिए उत्तम मार्ग से ले चलो। आप हमारे समस्त कर्मो और आचरणों को जानते हैं। बार-बार पुकारने वाले या बढ़ते हुए इन पापों को आप हम से पृथक कर दो। आपके लिए हम अत्याधिक नमस्कार की उक्ति को समर्पित करते है।"

अग्नि परमात्मा की प्रकाशदायिनी नेतृत्व शक्ति का ही नाम है। अतः अग्नि जो ज्ञान का देवता है, उससे यह प्रार्थना करना उचित है कि वह हमें बढ़ते हुए पाप कर्म से दूर रखे।

***

संकटमोचन श्री हनुमान

श्री राम कथा के सबसे विलक्षण एवं विस्मयकारी व्यक्तित्व हैं 'श्री हनुमान'। वास्तव में माँ जानकी खोजरत श्री राम के हनुमान से मिलन के बाद तो हनुमान श्री हरिगाथा से एक क्षण के लिये भी विलग नहीं होते, तथा हर पल संकटमोचन के रूप में दशरथ–नंदनों के साथ छाया के समान जुड़े रहते हैं। श्री हनुमान का व्यक्तित्व जितना अदभुत एवं रहस्यमय है उतना ही अदभुत और रहस्यमय है उनका आविर्भाव, उनका जन्म। हनुमान चालीसा में उनके लिये 'शंकर–सुअन', 'केसरी नन्दन' तथा 'अन्जनी पुत्र', 'पवनसुत नामा' जैसी पंक्तियाँ लिखी गई हैं जिनका अर्थ है कि उनकी माता अन्जना देवी तथा पिता कपिराज केसरी, वायुदेव पवन एवं साक्षात् महादेव शंकर हैं। हनुमानोत्पत्ति से सम्बन्धित एक पौराणिक आख्यान कुछ इस प्रकार है :

स्वर्गपति इन्द्र की रूप–गुण सम्पन्न एक अप्सरा पुन्जीकस्थला अत्यन्त चपल एवं चंचल थी। इसी चपलतावश उससे एक ऋषि का उपहास हो गया। क्रोधवश ऋषि ने उसे श्राप दे दिया "वानरी की तरह चंचलता करने वाली, तू वानरी हो जा"। शापग्रस्त अप्सरा ने वानरराज कुंजर की पुत्री के रूप में जन्म लिया जहाँ उसका नाम रखा गया 'अन्जना'। अन्जना का विवाह कपिराज केसरी के साथ हुआ जो सुमेरू पर्वत पर निवास करते थे। अनेक वर्षों के सुखी दाम्पत्य–जीवन के बाद भी जब अन्जना को मातृत्व प्राप्त नहीं हुआ तो मतंग मुनि के परामर्श पर वह भगवान वेंकटेश्वर के चरणों में तप करने वृषभांचल जा पहुँची। देवी अन्जना की कठोर तपस्या से प्रसन्न हो उमानाथ ने आशीर्वाद दिया "एकादश रुद्रों में से मेरा एक अंश ग्यारहवाँ रुद्र रूप ही तुम्हारे पुत्र के रूप में प्रकट होगा। तुम मंत्र ग्रहण करो, पवन देवता तुम्हें प्रसाद देंगे जिसके फलस्वरूप तुम्हें सर्वगुणसम्पन्न पुत्र की प्राप्ति होगी।"

शिव पुराण में वर्णित एक कथा के अनुसार एक बार उमापति शंकर ने लक्ष्मीपति विष्णु से अनुरोध किया "प्रभो! मैंने आपके मत्स्यादि सभी अवतार स्वरूपों का दर्शन किया था, किन्तु अमृत–वितरण के समय आपने परम लावण्यमयी स्त्री का वेश धारण किया, उस अवतार स्वरूप के दर्शन से मैं वंचित ही रह गया। कृपया, मुझे उस रूप के भी दर्शन करा दें, जिसे देख देवता एवं दानव सभी मोहित हो गये थे।"

क्षीराब्धिशायी विष्णु के लाख समझाने पर भी जब नीलकंठ शिव नहीं माने तो श्री हरि ने मायावी वातावरण की रचना कर मोहिनी रूप धारण किया और योगीश्वर शंकर को

अपने लीला जाल में फाँस लिया। मोहिनी रूप को देखकर पार्वतीश्वर अपनी सुध–बुध खो बैठे और मोहिनी के पीछे दौड़ पड़े। मदन का दहन करने वाले त्रिनेत्र को अपनी स्थिति का भान तभी हुआ जब उनका रेतस स्खलित हुआ। भगवान शंकर का यह अमोघ वीर्य सप्तर्षियों द्वारा एक पत्ते पर स्थापित किया गया। कालांतर में पत्ते पर स्थापित यही वीर्य पवन देव के माध्यम से अन्जना ने प्रसाद रूप में प्राप्त किया और सर्वगुणसम्पन्न एक पुत्र को जन्म दिया।

शिव के अंश का पवन के माध्यम से केसरी पत्नी अन्जना की कोख से जन्मने के कारण ही श्री हनुमान को 'शंकर सुअन', 'पवन पुत्र', 'केसरी नंदन' तथा 'आन्जनेय' जैसे नामों से विभूषित किया गया है।

रामकथा में श्री हनुमान के जिन रूपों की अधिक चर्चा होती है वे हैं– 'महावीर','संकटमोचन','रामभक्त' एवं 'सेवक शिरोमणि', परन्तु श्री हनुमान पर उपलब्ध स्वतंत्र साहित्य में उनके व्यक्तित्व के अन्यान्य पहलुओं पर जानकारी मिलती है। श्री हनुमान चालीसा में ही उनको 'विद्यावान' कहा गया है। विद्या उन्होंने साक्षात् सूर्यदेव से प्राप्त की थी।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार हनुमान से प्रथम भेट के बाद स्वयं श्री राम अनुज लक्ष्मण से एकान्त में कहते हैं ''हे लक्ष्मण! जिसे ऋग्वेद की शिक्षा न मिली हो, जिसने यजुर्वेद का अभ्यास न किया हो, और जो सामवेद का विद्वान न हो वह इस प्रकार सुन्दर भाषा में वार्तालाप नहीं कर सकता। निश्चय ही इन्होंने समूचे व्याकरण का कई बार स्वाध्याय किया है....।''

'रामरक्षास्तोत्र' में श्री हनुमान को 'ज्ञानिनामाग्रगण्य' कहा गया है। समुद्र लाँघने के प्रसंग में जाम्बवान हनुमान को सम्पूर्ण शास्त्रवेत्ताओं में श्रेष्ठ बताते हैं।

इसी प्रसंग में हनुमान की परीक्षा लेने के निमित्त देवताओं द्वारा प्रेरित सुरसा (नागमाता) कहती हैं ''हे बुद्धिमानों में श्रेष्ठ! जाओ श्रीराम का कार्य सिद्ध करो।''

वर्तमान संदर्भ में श्री हनुमान के जिस रूप का अत्याधिक महत्व है वह है उनका राजनयिक रूप।

ऋष्यमूक पर्वत पर छिपे भयग्रस्त सुग्रीव श्री हनुमान को दो अज्ञात धनुषधारियों का सही परिचय जानने के लिये प्रेषित करते हैं। सही परिचय जान लेने पर श्री हनुमान भाँप लेते हैं कि श्री राम और सुग्रीव की मैत्री दोनों के हित में कार्य कर सकती है। अतः वे सुग्रीव द्वारा अधिकृत न होने पर भी स्वयं अपनी ओर से श्री राम के साथ मैत्री–प्रस्ताव रखते हैं। वे न केवल मैत्री कराते हैं, वरन् सुग्रीव के चंचल स्वभाव के कारण मैत्री टूट न जाए, इस हेतु अग्नि को इस मित्रता का साक्षी भी बनाते हैं।

अहंकार एवं क्रोध की प्रतिमूर्ति दशानन के सम्मुख मेघनाथ द्वारा ब्रह्मास्त्र बंदी हनुमान अत्यंत सौम्य एवं मृदु भाषा में कहते हैं ''हे राक्षसराज दशानन! आप तो महामति हैं, नीतिज्ञ और धर्मज्ञ हैं, अर्थ और काम के मर्म को भली भाँति जानते हैं, फिर पराई स्त्री का इस प्रकार अपहरण करके बलात् घर में रखने का शठता–धूर्तता पूर्ण और महाअशोभनीय कुकर्म आपसे कैसे हो गया ?...''

जब शत्रु शिविर से विभीषण शरणापन्न होकर राम–शिविर में प्रवेश चाहता है तब श्री राम के सुरक्षा प्रमुख सुग्रीव, प्रज्ञाचक्षु अंगद, वृद्ध नीतिज्ञ जाम्बवान तथा शम्भू मैन्द आदि सभी मन्त्री सलाहकार एक मत से श्री राम को सलाह देते हैं ''यह अरि शिविर से आया शत्रुभ्राता है और इस पर कदापि विश्वास न किया जाए। जो संकट काल में अपने सगे भ्राता का साथी नहीं हुआ, वह हमारा कैसे हो सकता है? इसे बंदी बनाने अथवा इसके वध की आज्ञा शीघ्र प्रदान की जाए....।''

ऐसे समय चतुर राजनयिक श्री हनुमान सबके विपरीत राय प्रकट करते हुए कहते हैं –

'' विभीषण को निःसंकोच शिविर में प्रवेश दे दिया जाए। ये हमारे लिये अत्यंत लाभदायक और सहायक सिद्ध होंगे।....''

श्री हनुमान के व्यक्तित्व का सर्वाधिक अपरिचित एवं रहस्यमय पहलू है उनका संगीताचार्य होना। 'संगीत पारिजात' नामक ग्रंथ में शिव तथा भरत के साथ–साथ श्री हनुमान को संगीत शास्त्र का प्रमुख प्रवर्तक माना गया है।

तंजौर के राजा रघुनाथ (विक्रमी सत्रहवीं शती) ने अपने ग्रंथ 'संगीत सुधा' में 'अन्जनानंदन संहिता' एवं 'आन्जनेय भारतम्' नामक ग्रंथों का उल्लेख किया है।

'अनूप संगीत विलास' के रचयिता भावभट्ट के अनुसार श्री हनुमान के नाम पर जिन संगीतालंकारों का वर्णन उपलब्ध है उनमें से प्रमुख हैं भद्र, ग्रीव, भाल, प्रकाश,बिन्दु,संधिप्रच्छादन एवं उद्वाहित।

इस ग्रंथ के अनुसार संगीत शास्त्र के आठ प्रवर्तक परमाचार्य हैं। अन्जनीपुत्र, मातृगुप्त, रावण, नन्दिकेश्वर, स्वातिर्गण, बिन्दुराज, क्षेत्रराज, और काहल। इस अर्थ में श्री हनुमान संगीताचार्य, शास्त्रीय संगीत प्रवर्तक एवं भक्ति संगीत के मूल स्रोत हैं।

डा. सुन्दर लाल,
आगरा विश्वविद्यालय

जापानी लोक कथा

बुलाती है बिल्ली - सत्यभूषण वर्मा

जापान के एक नगर में उसुगुमो नामक एक नर्तकी थी । उसके पास एक पालतू बिल्ली थी । एक दिन नर्तकी अपने मित्रों के साथ बैठी थी । उसकी बिल्ली वहाँ आ पहुँची । बिल्ली ने चारों ओर निगाह घुमाई और अचानक न जाने उसे क्या हुआ, वह बेचैन हो उठी और नर्तकी के चारों ओर घूमती हुई उसके कपड़ों को दांतों से पकड़ कर खींचने लगी। लगा जैसे बिल्ली पागल हो गई है ! नर्तकी घबरा गई । उसने और उसकी सहेलियों ने बिल्ली को दूर भगाने के जितने भी प्रयास किए, बिल्ली उतने ही हठ के साथ नर्तकी के कपड़े खींचने लगी ।

नर्तकी के एक प्रशंसक ने जब देखा कि बिल्ली किसी तरह काबू नहीं आ रही है, तो उसने तलवार निकाल कर बिल्ली की गर्दन पर वार किया। बिल्ली की गर्दन एक झटके के साथ अलग हो गई । तभी एक चमत्कार हुआ। गर्दन कटते ही बिल्ली का सिर जमीन पर गिरने से पहले उछलकर छत से टकराया ओर वहाँ उसने छत की कड़ी पर चिपके बैठे एक विषैले साँप को धर दबोचा ।

दूसरे ही झटके में वह सिर साँप को दबोचे हुए धरती पर आ गिरा और तड़प कर शांत हो गया । नर्तकी की आँखों में दुःख और पश्चाताप के आँसू थे । उसकी प्यारी बिल्ली उसे साँप से बचाने के लिए उसे वहाँ से हठाना चाहती थी और इसी प्रयत्न में उसने अपने प्राण गंवा डाले ।

नर्तकी ने बिल्ली की धूमधाम से अर्थी निकाली और परिवार के एक सदस्य की तरह पूरे विधि-विधान से उसे दफ़नाया । उसके शोक में वह सदा उसकी याद में खोयी रहने लगी । उसके एक प्रशंसक ने कारीगर से लकड़ी की एक बिल्ली बनवाई जो नर्तकी की मृत बिल्ली की प्रतिकृति थी। लकड़ी की इस बिल्ली का बायाँ पंजा उसके कान तक इस तरह उठा हुआ था जैसे अपनी स्वामिनी को अपने पास बुला रही हो। नर्तकी को वह बिल्ली इतनी पसंद आई कि वह उसे जीवित बिल्ली की तरह प्यार करने लगी ।

एक गाँव में एक बुढ़िया की छोटी सी दुकान थी । बुढ़िया गरीब थी। दुकान पर ग्राहक भी कम ही आते थे । एक दिन बुढ़िया को कहीं से मिट्टी की बनी एक बिल्ली मिल गई जो नर्तकी उसुगुमो की बिल्ली की नकल में बनाई गई थी ।

बुढ़िया ने उसे दुकान पर रख दिया । उसकी दुकान के सामने से जो भी गुजरता, वह कौतूहल से उस मिट्टी की बिल्ली को देखने लगता । उसे लगता जैसे बिल्ली उसे ही बुला रही हो । वह खिंचा हुआ सा बुढ़िया की दुकान में चला आता। बुढ़िया की दुकान दूर-दूर तक प्रसिद्ध हो गई और खूब चल निकली । बुढ़िया के दिन आराम से कटने लगे।

आज जापान की दुकानों में चीनी मिट्टी, लकड़ी अथवा धातु की बनी ऐसी बिल्ली को कहीं भी देखा जा सकता है । जापानी में उसे *मानेकी नेको* कहते हैं ।

चाँद की चाँदनी

मिवाको कोएजुका

जापानी भाषा में महीना और चँद्रमा के लिए एक ही शब्द इस्तेमाल होता है –त्सुकि । यह शब्द दोहराने पर दूसरी बार का उच्चारण जुकि हो जाता है । खैर, कहते हैं : त्सुकि–जुकि नी त्सुकि मिरू त्सुकि वा ओकेरेदो त्सुकि मिरू त्सुकि
वा कोनो तसुकि नो त्सुकि ।
३१ अक्षरों वाली इस कविता में त्सुकि शब्द आठ बार आया है जिससे कविता में आधे अक्षर चाँद और आधे महीने हो गए । यह कविता अकसर सितम्बर–अक्तूबर में याद की जाती है क्योंकि जापान में मान्यता है कि चँद्रतिथि पत्र के अनुसार आठवें महीने की पूर्णिमा दूसरे महीनों की तुलना में सर्वाधिक सुन्दर होती है । वैसे शरत् में रात्रि गगन सुन्दरतम् माना जाता है।

कहते हैं कि आठवें महीने की पूर्णिमा की किरणों में स्नान करते हुए खाने–पीने और गीत–संगीत का आनन्द उठाना, हज़ार वर्ष पहले जापानियों ने चीन से सीखा था। जापानियों ने चीन का यह विचार भी अपना लिया कि चँद्रमा पर खरगोश शरतकाल में अमृत बनाता है। पृथ्वीवासी यह अमृत प्राप्त तो नहीं कर सकते , लेकिन शशांक की किरणों में स्नान करते हुए उसका लाभ उठाया जा सकता है। इस प्रकार जापान में शरत् की सुन्दरतम पूर्णिमा को मौसम की फसल अर्पित करने के बाद उसे खाकर अमृत स्नान और अमृतपान का आनन्द उठाने की रीत चली आ रही है।

वैसे जापानियों की पसंद–नापसंद शत–प्रतिशत चीनियों जैसी नहीं रही। जापानियों को तो बस एकटक चाँद को निहारने में ही अधिक आनन्द मिलता रहा है। वे नौवें महीने का चाँद देखने का आनन्द भी उठाते आए हैं। मगर कहते हैं कि एक महीने बाद चाँद पूर्णिमा के बजाय तेरहवीं तिथि यानी त्रयोदशी को अधिक आकर्षक दिखता है। इस वर्ष जापान में चँद्र तिथिपत्र के अनुसार आठवें महीने की पूर्णिमा नौ सितम्बर को थी और उसके अगले महीने नौ अक्तूबर को पूर्णिमा आई। भारत में आठ अक्तूबर को शरत् पूर्णिमा का पर्व मनाया गया। मैंने कहीं सुना है कि भारत में मान्यता है कि शरत् पूर्णिमा की रात चाँद से अमृत बरसता है।

आठवें महीने की यह पूर्णिमा जापान में और भी कई रूपों में महत्वपूर्ण मानी जाती आ रही है। एक लोककथा के अनुसार बाँस की पोर से जन्मी एक सुन्दर कन्या का पालन पोषण वृद्ध दम्पति ने किया। देखते ही देखते तीन वर्ष के भीतर इस दैवी कन्या ने रूपसी,दीप्तिमान युवती का रूप धारण कर लिया। विवाह के लिए अनेक प्रस्ताव आने लगे , लेकिन वो तो यह सभी प्रस्ताव अस्वीकार करके आठवें महीने की पूर्णिमा को अपनी पोशाक और अमृत से भरा एक नन्हा–सा कलश वृद्ध दम्पति के यहाँ छोड़कर चँद्रलोक वापस चली गई। उसकी छोड़ी हुई यह वस्तुएँ तत्कालीन सम्राट को सौंप दी गई। किन्तु सम्राट ने सोचा कि ऐसी रूपवती कन्या के साथ बिना दीर्घायु होने का क्या लाभ और उन्होंने वो वस्तुएँ जापान के सर्वोच्च पर्वत फुजि के शिखर पर जलवा दीं। कहते हैं कि फुजि पर्वत बहुत समय तक धुआँ उगलता रहा। तो देखा आपने सम्राट ने घर बैठे प्राप्त दुर्लभ अमृत इतनी आसानी से गँवा दिया।

लोककथा में यह तो नहीं बताया गया कि फुजि पर्वत से उठता वो धुआँ कभी–कभी चँद्रमा तक पहुँचकर उसका सुन्दर मुखड़ा छिपाने की कोशिश करता है। वैसे काले–काले बादल छँटने के बाद चाँदनी में गज़ब का निखार आ जाता है।

जापानियों को तो चँद्रमा इतने ध्यान से एकटक निहारने की आदत पड़ गई है कि १७ वीं सदी के उत्तरार्ध में जन्मे कवि ओनित्सुरा ने चिंतित होकर यह लघु कविता हाइकु लिख डाली:
मुकाशि करा अना मो अकाजुयो आकि नो सोरा।
अर्थात,
पुराने समय से, कमाल है छेद नहीं हुआ शरत् के गगन में।

✸✸✸

जापानी – हिन्दी कितनी अपनी – युकियो यासुई

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि भारत और जापान के संबधों का इतिहास अत्येत प्राचीन है। विशेषकर जापान में बौद्धमत का प्रादुर्भाव भारत की ही देन है।

सन् ७५१ में जापान के नारा नगर में कांसे की विशाल बौद्ध प्रतिमा की स्थापना हेतु विश्व के विशालतम काष्ठ भवन का निर्माण कार्य सम्पन्न हुआ। प्रतिमा की प्राण प्रतिष्ठा के लिए भारत से बौद्ध पुजारी गुरू बोधिसेन पधारे थे और उन्ही के प्रधान पौरोहित्य में प्रतिष्ठा सँस्कार सम्पन्न हुआ। किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं समझा जाना चाहिए कि जापानी और हिन्दी भाषाओं में व्याकरण मूलक समानताएँ हैं। दोनों भाषाओं के लिखने–बोलने में कुछ समानताएँ प्रतीत हो सकती हैं किन्तु तुलनात्मक भाषा विज्ञान और जापानी लिपि के विकास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर नज़र डालने पर दोनों भाषाओं के मूलभूत अन्तर अपने–आप उजागर हो जाते हैं।

भाषाविज्ञान के तुलनात्मक अध्ययन से सिद्ध हो चुका है कि हिन्दी और अन्य प्रमुख भारतीय भाषाओं की जननी सँस्कृत इन्डो–यूरोपियन भाषा परिवार की सदस्य है,जिसमें ग्रीक,फ्रेंच,इतालवी,स्पेनी,और जर्मन भाषाएँ भी शामिल हैं। इसके विपरीत जापानी भाषा तो कोरियाई,मंगोलियाई,तुर्की,और तुंगुसी भाषाओं की तरह अल्ताई भाषा परिवार की सदस्य है।

इस बुनियादी अन्तर को समझने के लिए इतिहास के गर्त में कुछ गहरे उतरना होगा। बौद्धमत छठी शताब्दी या ठीक–ठीक कहें तो सन ५३८ में भारत से कोरिया और चीन के रास्ते जापान पहुँचा।

कोरियाई प्रायद्वीप के एक प्राचीन देश कुदारा के सम्राट सेइमेई ने जापान के तत्कालीन सम्राट किम्मेई को चीनी भाषा में अनुदित बौद्ध सूत्र और एक बौद्ध देवी की काष्ठ प्रतिमा उपहार स्वरूप भेजी थी। वही बौद्धमत से जापान का प्रथम परिचय था।

इसके बाद ही जापान में सभ्यता के एक नए युग का सूत्रपात हुआ क्योंकि यह धारणा आम है कि जापान के सॉंस्कृतिक,आध्यात्मिक जीवन पर बौद्धमत ने गहरी छाप छोड़ी। साथ ही यह भी सच है कि चीनी साहित्य से जापान का औपचारिक परिचय यहाँ के आम सॉंस्कृतिक–सामाजिक जीवन के लिए युगप्रवर्तक सिद्ध हुआ क्योंकि चीनी लिपि के आगमन से पहले जापानी भाषा की अपनी कोई लिपि नहीं थी।

चौथी शताब्दी में कोरिया और जापान तथा चीन और जापान के निवासियों के बीच व्यक्तिगत सम्पर्कों के दौरान पहले–पहल कॉंजी लिपि से परिचय हुआ। जापान में अनेक स्थलों पर पुरातात्विक खुदाई के दौरान कॉंजी लिपि के शिलालेख मिले हैं। पुरातत्व शास्त्रियों के अनुसार यह शिलालेख पांचवी–छठी शताब्दी के हैं।

उससे पहले तक तो जापानी लोगों के बीच आपसी सम्पर्क,जानकारी का आदा–प्रदान सब कुछ मौखिक रुप में ही होता था। कॉंजी लिपि के आगमन ने तमाम विचारों और ज्ञान को लिखकर रखने का अवसर प्रदान किया।

कॉंजी अक्षर वास्तव में चित्राक्षर हैं जिनमें से प्रत्येक का अपना अर्थ है। जापानी भाषा में इनके उच्चारण में ***ओन*** तथा ***कुन*** ध्वनियाँ निहित हैं। इनमें से ***ओन*** ध्वनि उस चीनी अक्षर की मूल ध्वनि पर आधारित है जबकि ***कुन*** का आधार जापानी बोली की मूल ध्वनि है। अनेक कॉंजी अक्षरों की एक से अधिक ***ओन*** ध्वनियां जापानी भाषा के विदेशी ही नहीं जापानी अध्येताओं को भी उलझा देती है। इनमें से कुछ प्रमुख ओन ध्वनियां इस प्रकार हैं:–

क) - कान (हान) ओन

यह तुंग राजवंश के शासनकाल में राजधानी चांगान और आसपास के क्षेत्र की आम बोली की मानक ध्वनि है जो आठवीं शताब्दी में चीन भेजे गए जापानी राजदूतों,बौद्ध पुजारियों और छात्रों के साथ जापान आई।

ख) - गो (वु) ओन

यह चीन में यांगत्सिचियान नदी के निचले इलाके की बोली की ध्वनियां हैं जो मुख्यतः जापानी बौद्ध पुजारियों के साथ १०वीं शताब्दी में जापान आई।

ग) - तो (तुंग) ओन

चीन में यांगत्सिचियान नदी के दक्षिण में प्रचलित बोली की यह ध्वनियां १२वीं से १७ वीं शताब्दी के बीच जापानी बौद्ध पुजारियों और व्यापारियों के साथ जापान आई।

काना

सातवीं शताब्दी में जापानी साहित्य रचना में चीनी चित्राक्षरों के साथ मिलाकर लिखने के लिए मूल उच्चारण के आधार पर कुछ चुने हुए काँजी अक्षरों का उपयोग ध्वन्यात्मक अक्षरों की तरह किया जाने लगा (देखें तालिका –१) और इन्हें नाम दिया गया काना।

मन्यो-शु

ओतोमो याकामोचि (७१८–७८५) राज दरबार के एक प्रमुख अधिकारी ही नहीं विलक्षण कवि भी थे। उन्होंने पांचवी शताब्दी के आरम्भिक वर्षों से लेकर अपने समय तक करीब ४०० चर्ष की अवधि में रची गईं लाखों कविताओं में से ४५०० रचनाएं चुनकर २० खण्डों में संकलित कीं।

इस काव्य संग्रह को नाम दिया गया मन्यो–शु। कविताओं के छंद विन्यास में काना अक्षरों की भूमिका महत्वपूर्ण सिद्ध हुई क्योंकि जापानी कविता में लय के लिए वर्णसंख्या और क्रम ५, ७, ५, ७, ७ का होना चाहिए।

४८ ध्वन्यात्मक काँजी अक्षरों के लिए निर्दिष्ट काना अक्षरों को मन्यो काना कहा गया।

काताकाना

चीनी काँजी अक्षरों में २१४ ध्वन्यात्मक तत्व होते हैं। किबिनो मकिबि (६६५–७७५) ने भाषाई सरलता की दृष्टि से कुछ काँजी अक्षरों के ध्वन्यात्मक तत्व लेकर ध्वन्यात्मक लिपि के रूप में ४८ काना अक्षर तैयार किए।

काता का अर्थ है अपूर्ण या एक युग्म का अंग। इसलिए काना के साथ काता शब्द जोड़ दिया गया।

तालिका -१

काताकाना वर्णमाला और सम्बद्ध काँजी अक्षर

阿	伊	宇	江	於	加	幾	久	介	己	
ア	イ	ウ	エ	オ	カ	キ	ク	ケ	コ	
a	i	u	e	o	ka	ki	ku	ke	ko	
अ	इ	उ	ए	ओ	क	कि	कु	के	को	
散	之	須	世	曽	多	知	州	天	止	
サ	シ	ス	セ	ソ	タ	チ	ツ	テ	ト	
sa	si	su	se	so	ta	ti	tu	te	to	
स	सि	सु	से	सो	त	ति	तु	ते	तो	
奈	仁	奴	禰	乃	八	比	不	部	保	
ナ	ニ	ヌ	ネ	ノ	ハ	ヒ	フ	ヘ	ホ	
na	ni	nu	ne	no	ha	hi	hu	he	ho	
न	नि	नु	ने	नो	ह	हि	हु	हे	हो	
万	美	牟	女	毛	也		由		與	
マ	ミ	ム	メ	モ	ヤ		ユ		ヨ	
ma	mi	mu	me	mo	ya		yu		yo	
म	मि	मु	मे	मो	य		यु		यो	
良	利	流	礼	呂	和	井		延	乎	尓
ラ	リ	ル	レ	ロ	ワ	ヰ		ヱ	ヲ	ン
ra	ri	ru	re	ro	wa	wi		we	wo	n
र	रि	रु	रे	रो	व	वि		वे	वो	अं

हिराकाना

नौवीं शताब्दी के मध्य में चुने हुए काँजी अक्षरों की लेखन शैली को और सरल करके हिराकाना ध्वन्यात्मक लिपि विकसित की गई। (देखें तालिका–२)

उन दिनों हिराकाना अक्षरों का उपयोग अधिकाँशतः महिला लेखिका किया करती थीं इसलिए हिराकाना को ओन्ना काना (नारी काना) और मन्यो काना को ओतोको काना (नर काना) कहा गया।

काना अक्षरों की वर्णमाला

समकालीन जापानी भाषा में ५ स्वर और १३ व्यँजन हैं। सुप्रसिद्ध जापानी भाषा शास्त्री प्रोफेसर शिनकिचि हाशिमोतो ने गहन अध्ययन से पता लगाया है कि जापानी भाषा में स्वरों की सँख्या विभिन्न युगों में भिन्न–भिन्न रही हैः–

तालिका - २

हिराकाना वर्णमाला और सम्बद्ध काँजी अक्षर

安	以	宇	衣	於	加	幾	久	計	己
あ	い	う	え	お	か	き	く	け	こ
a	i	u	e	o	ka	ki	ku	ke	ko
अ	इ	उ	ए	ओ	क	कि	कु	के	को
佐	之	寸	世	曽	太	知	州	天	止
さ	し	す	せ	そ	た	ち	つ	て	と
sa	si	su	se	so	ta	ti	tu	te	to
स	सि	सु	से	सो	त	ति	तु	ते	तो
奈	仁	奴	禰	乃	波	比	不	部	保
な	に	ぬ	ね	の	は	ひ	ふ	へ	ほ
na	ni	nu	ne	no	ha	hi	hu	he	ho
न	नि	नु	ने	नो	ह	हि	हु	हे	हो
末	美	武	女	毛	也		由		与
ま	み	む	め	も	や		ゆ		よ
ma	mi	mu	me	mo	ya		yu		yo
म	मि	मु	मे	मो	य		यु		यो
良	利	留	礼	呂	和	為		恵	遠	无
ら	り	る	れ	ろ	わ	ゐ		ゑ	を	ん
ra	ri	ru	re	ro	wa	wi		we	wo	n
र	रि	रु	रे	रो	व	वि		वे	वो	अं

युग	स्वर सँख्या
नारा युग (आठवीं से नौवीं शताब्दी)	८
हेइयान युग (नौवीं से १२वीं शताब्दी)	५
मुरोमाची युग (१५वीं शताब्दी)	६
तब से अब तक	५

आठवीं शताब्दी में सँस्कृत सूत्र ग्रन्थ सिद्धम जापान लाया गया। नौवीं शताब्दी में बौद्धमत की हिमयान शाखा में तमन्दाई सम्प्रदाय के विद्वान पुजारी अन्नेन (८४१–८८५) ने तेन्दाई तान्त्रिक बौद्ध सूत्र संकलित किए। उन्हें सँस्कृत का विशद ज्ञान था और उन्होंने सित्तान्जो नाम से सँस्कृत भाषा के बारे में एक पुस्तक भी लिखी है।

उन्होंने ४८ जापानी ध्वन्यात्मक अक्षरों की वर्णमाला तैयार की थी जिसमें अ, इ, उ, ए, ओ के बाद क,स,त,न,म,य,र,व व्यँजनों को स्वरों के साथ मिलाकर क,कि,कु,के,को,स,सि,सु,से,सो.... का रूप दिया गया।

इन तथ्यों से लगता है कि हिन्दी और जापानी भाषा में स्वर और व्यँजन जैसी कुछ समानताएँ मात्र संयोग हो सकती हैं। किन्तु दोनों भाषाओं का मूल भिन्न है। यह हर्ष की बात है कि दोनों देशों के बीच अन्य क्षेत्रों के साथ–साथ भाषायी आदान–प्रदान भी बढ़ रहा है। हो सकता है यह सम्पर्क भविष्य में ज्ञान का कोई नया भंडार, कोई नया रहस्य उजागर करे।

कहानी

अंकल जी

हरजेन्द्र चौधरी

नींद आई ही थी कि दरवाज़े की घंटी बज उठी।...शायद एन.एच.के. टेलीविज़न का कोई कर्मचारी टी.वी. देखने की मासिक फीस लेने आया होगा। मैंने तीन हज़ार येन हाथ में लेकर अरवाज़ा खोला। अंकल जी खड़े थे —मुस्कराते हुए !

आँखें मलते हुए मैंने नमस्कार किया। नमस्कार शब्द को दोहराते हुए वो अंदर आ गए। बैठते हुए बोले — 'क्या कर रहे थे ?'

'सो रहा था।'— कहते हुए मुझे उबासी आने लगी।

' उम्मीद है कि मैंने आपको डिस्टर्ब नहीं किया'— वो बिना अनुभूति के बोले और बिना कारण आदतन हँस दिए... उनकी उम्र मेरी उम्र से सवा—डेढ़ गुनी है। मैं चुप रहा। उन्होंने मेज़ पर से रिमोट उठाया और टी.वी. ऑन कर दिया।

'आप चाय लेंगे या कॉफी ?'— मैंने पूछा।—'खाना बने तब तक चाय या कॉफी कुछ बना लीजिए'— उन्होंने बहुत अनौपचारिक होकर कहा। उस शाम मेरा खाना बनाने का कोई इरादा नहीं था। 'सुशी' का एक पैकेट खाकर,सिरदर्द की गोली लेकर मैं लेटा था। सोचा था कि अच्छी नींद आएगी और सुबह तपन-चार बजे जब भी जाग आएगी, उठकर पढ़ने लग जाऊँगा।

मैंने आलू — गाजर छील, काट, धो कर प्याज़ में फ्राई करके चावल चढ़ा दिए। चाय लेकर अंकल जी के सामने हाज़िर हुआ—'लीजिए !' वो टी. वी. में खोए हुए थे। भूकंप के कारणों की खोजबीन के बारे में कोई कार्यक्रम चल रहा था। बीच—बीच में कोबे शहर के दृश्य भी दिखाए जा रहे थे। तहस—नहस इमारतें। जगह—जगह जलते हुए घर। टूटे हुए पुल। धँसी हुई सड़कें। उलटी हुई ट्रेनें।

—'जब भूकंप आया, तब जापान में ही थे?'— उन्होंने चाय का कप उठाते हुए ऐसे पूछा जैसे टी.वी. अनाउन्सर से पूछ रहे हों। वो मेरी ओर नहीं देख रहे थे।

—'जी मैं इसी घर मे था गहरी नींद में'—मैंने बताया।

—'आप बहुत लक्की हैं'— वे एक क्षण के लिए मेरी ओर देख कर बोले और हँसने लगे।—'जी ?'—मैं असमंजस मे पड़ गया था।

—'आप बच गए। ऐसे हादसों के बीच से बचकर निकलना तो खुशकिस्मती है।'—वो फिर हँसने लगे। फिर कुछ गंभीरता धारण करते हुए बोले— मैं भी लक्की हूँ। सन सैंतालीस में मैं दसेक साल का था। हम लोग रावलपिंडी से भागकर आए थे। रास्ते में मारे भी जा सकते थे, पर खुशकिस्मती से बच गए। दो तीन साल के भीतर ही लखनऊ में बाबू जी का बिज़नेस भी चल निकला। ज़िन्दगी पटरी पर आ गई।..अब तो ठाठ हैं। वसंत विहार में अपना मकान है। लड़का आई॰ए॰एस॰ है। लड़की और दामाद दोनों डॉक्टर हैं। अब तो मिनिस्ट्री में मेरी हैसियत भी आई॰ए॰एस॰ के बराबर ही है। भगवान की कृपा से किसी चीज़ की कोई कमी नहीं है' — बीच में थोड़ा हँस कर फिर बोलने लगे—'आप को कभी किसी तरह की मदद की ज़रूरत हो तो मुझ से ज़रूर कहिए।'

मैं चुप रहा। केन्द्र सरकार के दो—तीन मंत्रियों के नाम लेकर उन्होंने कहा कि वो सब फ्रेंड हैं।

'कुकर' की सीटी बजी। बासमती की महक घर-भर में फैल गई। दूसरी सीटी आने से पहले ही मैंने गैस बंद बुझा दी। चाय के खाली कप 'सिंक' में रखकर मैंने कहा—'मौसम अच्छा है। जब तक कुकर की भाप निकले,आइए बाहर टहल आते हैं।'

—'आप टहल कर आएँ,मैं ज़रा थका हुआ हूँ'— उनके चेहरे पर थकान के चिन्ह उभरे।

मैंने एक लंबे क्षण तक उनके चेहरे को ध्यान से देखा। उनकी हिटलरी मूँछें भी सफेद हो चली थीं और भौंहे भी। बचे—खुचे बाल तो खैर सफेद थे ही। उनका माथा बेहद ढलवाँ था। कान बड़े—बड़े

थे। नाक भी काफी उठी हुई थी, जिसपर अपने चश्मे को नीचे सरका कर वो बड़ी घाघ नज़रों से टी.वी देख रहे थे।

उनसे दुबारा कहने की बजाय मैं अकेला ही बाहर निकल गया। बाहर हल्की हवा चल रही थी। अप्रैल का अंतिम सप्ताह था। चेरी के पेड़ों पर आख़िरी गुलाबीपन झलक रहा था। घर से पाँच–सात मिनट की दूरी पर स्थित सुपर मार्केट से दही, गाजर, मूली और खीरे खरीदे और वापस आते हुए रास्ते में सड़क किनारे खड़ी वैंडिग मशीन से बीयर के दो 'कैन' भी ले लिए। एक बुज़ुर्ग भारतीय मेहमान घर में हैं, थोड़ी सेवा तो करनी चाहिए !

घर लौटा तो वो अब भी टी.वी. में डूबे हुए थे। एन. एच.के द्वारा प्रसारित बाइलिंगुल समाचार अंग्रेज़ी में सुन रहे थे। मैंने सलाद तैयार किया। बीयर को गिलासों में उँडेला। इस बीच वो हाथ धोकर लौट आए। टी.वी. चलता रहा। हम लोग आमने–सामने डाइनिंग–कुर्सियों पर बैठ गए।

–'आपने तो इतना कर दिया'– बीयर और भेजन देखकर वो हँसे।–'लीजिए ! लीजिए !'–मैंने मुस्कराते हुए कहा। वो फिर हँसे। बार–बार हँसी जाने वाली यह निष्कारण हँसी कियी भी नए आदमी को परेशान कर सकती है। वो दिल से नहीं गले से हँस रहे थे। शायद यह ऐसी हँसी थी जो सामने वाले व्यक्ति को–बल्कि सारी दुनिया को मूर्ख बनाने के भ्रम से पैदा होती है।

–'लीजिए ! लीजिए !'–मैंने फिर दोहराया।–'जापानी बीयर काफी सोफ्ट होती है'– पहली चुस्की लेकर उन्होंने कहा।–'मुझे पता नहीं। मैं केवल मेहमानों का साथ देने के लिए कभी–कभी पी लेता हूँ, बस !'–मैंने कहा।

–'हाँ कोई अच्छी चीज़ तो यह है नहीं।'–वो फिर हँसे। बड़े–बड़े घूँट भरकर उन्होंने गिलास खाली कर दिया। मैंने अपने कैन में बची हुई बीयर भी उनके गिलास में उँडेल दी।–'अच्छी लग रही है ठंडी–ठंडी'–कहकर वो फिर हँसे।

भोजन के बाद मै उनके साथ ही निकला। जिस अर्धसरकारी संस्थान में वो प्रशिक्षण के लिए आए हुए थे,उसके गेट तक ठोड़ कर मैं घर लौटा,तब लगभग पौने ग्यारह बज गए थे।

इस तरह वो कई बार मेरे घर आए थे। हांलाकि पहली मुलाकात के दौरान मैने उनसे कहा था कि आने से पहले फोन कर लिया करें,मुझे सुविधा रहेगी। पर वो हमेशा 'अचानक' आए। मेरी सुविधा– असुविधा के बारे में सोचना उनके लिए अप्रासंगिक था।

जैसा कि भारतीय उपमहाद्वीप के लोगों के साथ होती है,उनसे भी मेरी पहली मुलाकात अचानक हुई थी। मैं सुपर मार्केट में कुछ खरीदारी करने गया हुआ था। प्रारंभिक दुआ–सलाम के बाद जब मैने बताया कि मैं लखनऊ ज़िले के एक गाँव का रहने वाला हूँ तो उन्होंने तपाक से कहा–' मैं भी ओरिजनली लखनऊ से ही हूँ। अब तो खैर हम नई दिल्ली में 'सैटल' हो गए हैं।

मैं उन्हें घर ले आया था। तब उन्हें जापान आए तीन–चार दिन हुए थे। मैने उन्हें खाना बनाकर खिलाया। उस शाम वो पूरे समय यहाँ की मँहगाई की बातें करते रहे। वो परेशान थे क्योंकि वो येन में नहीं रूपए में सोच रहे थे – 'पचास रूपए का एक टमाटर या एक सेब, तीस–पैंतीस रूपए की एक मूली, सत्तर रूपए का एक लीटर दूध, डेढ़–दो सौ रूपए के एक किलो चावल...... सब–कुछ मँहगा है।'

मैंने हुँकारा भरा 'जी!' बातों बातों में वे मुझे **बेटा** कहने लगे और मेरे **अंकल** जी बन गए। उन्होंने कहा–'दिल्ली फोन करना है। यहाँ से हो जाएगा ?'

मैंने कहा–' हाँ हो जाएगा। कीजिए। वहाँ का नम्बर डायल करने से पहले ज़ीरो ज़ीरो सिक्स वन, नाइन वन, वन वन मिलाइए।'

–'तुम्हारी ऑटी चिंता कर रहीं होंगी' वे बोले। फिर दुबारा से सब नम्बर पूछ कर डायल करने लगे। उन्होंने पत्नी से, पोता–पोती से बातें कीं –लगभग बारह–तेरह मिनट।

फोन करने के बाद वे हज़ार येन का नोट मेरी ओर बढ़ाकर बोले–'लीजिए।' मैंने कहा–'जब बिल आएगा तब मैं आपको बता दूँगा। तभी पूरा हिसाब कर लेंगे।' उन्होने नोट को वापस अपनी जेब में रख लिया और उठ खड़े हुए।

रसोई का चक्कर लगाया। ताक–झाँक करते–

करते 'फ्रिज' खोलकर देखा और बोले ' आपके पास तीन डिब्बे दूध रखा है। ''जी हाँ अंकल ,मैं रोज़ किलो भर दूध पिता हूँ क्योकि मैं शुद्ध शाकाहारी हूँ'' — मैंने बताया। —

'आज मैं एक डिब्बा यहाँ से ले जाऊँ। अच्छा लगेगा तो फिर खरीद लूँगा'— उन्होंने कहा और मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना एक डिब्बा दूध लेकर डायनिंग टेबल पर पड़े पोलीथीन बैग में रख लिया। मैं काफी दूर तक उन्हें छोड़कर आया। 'गुडनाइट' करने से पहले उन्होने कहा था—'अकेलापन लगेगा या जापानी भोजन से बोर हो जाऊँगा तो फिर आपके घर आऊँगा।'

भोजन और बातें करने की ललक लिए वे अनेक बार अचानक मेरे घर पधारे। हर बार अनौपचारिक और निष्कारण हँसी हँसते हुए।—'यू आर लाइक माइ फेमिली मेम्बर'— यह संवाद उन्होंने कई बार बोला था।

टेलीफोन बिल आने के बाद मैने उनके संस्थान में फोन किया तो पता चला कि वो तो चौदह मई को वापस चले गए। जहाँ तक मुझे याद है,उन्होंने मुझसे कहा था कि चौदह जून को दिल्ली लौटेंगे। हो सकता है कि मेरी याददाश्त मुझे धोखा देरही हो। संयोग की बात है कि कंसाइ एयरपोर्ट से दिल्ली तक एयर इंडिया की सीधी उड़ान इन दोनों तिथियों को थी।

टेलीफोन बिल देखकर मुझे यह भी पता चला कि जब—जब वो मेरे घर आए , करीब—हर बार उन्होंने यहाँ से दिल्ली फोन किया। पहली बार को छोड़कर ,हर बार मेरे अनजाने, मुझे सूचना दिए बिना ही उन्होने ऐसा किया।

उन्हें भारत वापस गए छह महीने बीत चले हैं। शुरू के तीन महीने तो मैंने प्रतीक्षा की थी कि शायद वे पत्र लिखें। फिर मैंने पत्र लिखा। कोई उत्तर नहीं। एक और पत्र लिखा। फिर भी कोई उत्तर नहीं। पता नहीं मेरे पत्र उन्हें मिले या नहीं।

दीवाली के आसपास एक शाम मैंने नई दिल्ली फोन करके उनसे सम्पर्क की कोशिश की। किसी महिला ने फोन उठाया। मैंने अपना नाम बताया और कहा कि 'मैं जापान से बोल रहा हूँ। अंकल जी से बात करवाइए।'—

आवाज़ आई 'अभी बुलाती हूँ। होल्ड कीजिए।'

ढाई—तीन मिनट तक बेचैनी—भरी प्रतीक्षा के बाद मुझे फोन काट देना पड़ा कुछ देर बाद मैंने फिर फोन मिलाया। उसी महिला स्वर ने कहा—'वे घर पर नहीं हैं। बाद में फोन कीजिए।'

रिसीवर रखने के बाद मुझे बहुत गुस्सा आया। शायद अनजाने में, मेरे मुँह से माँ—बहन की गालियाँ भी फूट पड़ी थीं।

करीब दो हफ्ते पहले मैंने उनके नाम एक रजिस्टर्ड लैटर भेजा है। मैं आजकल प्रतीक्षा में हूँ कि मुझे कभी भी किसी भी दिन उनका पत्र ज़रूर मिलेगा। मेरा मानना है कि ज़िन्दगी में हादसों के साथ—साथ चमत्कार भी घटित होते हैं...उनका, अपने 'अंकल जी' का, पत्र मुझे ज़रूर मिलेगा...

नो प्रोब्लेम

कहाँ हूँ मैं !
बेध्यानी में चौरंगी की सड़क को पार कर,
फँस गया हूँ मैं वाहनों की रेल-पेल में।
भड़कीली साड़ी पहने एक युवती।
मैला-सा वस्त्र सिर पर लपेटे
अधनंगा एक पुरुष पटरी की दूकान पर
घुटनों से ऊपर तक धोती लपेटे
लड़खड़ाता एक बूढ़ा।
दूकानें संगीत-वाद्यों की, पत्थर की तराशी
कला-कृतियों जूतों की।
चकरा गया हूँ मै इस भीड़ में।
ट्रक, बस, स्कूटर, रिक्शा, टांगा, बोझा
ढोती गाड़ियाँ
सब निकल जाती है एक-दूसरे को
रगड़ती सी
बड़ा बाजार की इस भाग-दौड़ को
निहारता मैं
''नो प्रोब्लेम,नो प्रोब्लेम''।
बंगाली नौजवान ड्राइवर फर्राटेदार अंग्रेजी
बोलता है
दौड़ाता हुआ अपनी पुरानी खटारा गाड़ी
को तंग गलियों में
रवीन्द्रनाथ टैगोर की जन्म-स्थली तक
बजाता हुआ हार्न जैसे
खेल रहा हो किसी खिलौने से।
अचानक हैण्डल खींचता है अचानक ही
रफ्तार घटाता है।
खिड़कियों के काँच ना खुलते है ना बन्द
होते है ।
न स्पीडोमीटर काम करता है, न पेट्रोल
की सुई।
इन्जन की घड़घड़ाहट झुंझलाहट पैदा
करती है।
सिर झुकाये मैं ड्राइवर की आवाज सुनता
हूँ कितनी ही बार-
''नो प्रोब्लेम,नो प्रोब्लेम''

मूल- ताकाशि आरिमा
अनुवाद- सत्यभूषण वर्मा

प्रेम की पीर

कहाँ वह पीर प्रेम की पाऊँ।
जिसके बिना शब्द रीते हैं,
सुर में लाख सजाऊँ।

दी जिसने कबीर को वाणी
मीरा थी जिसकी दीवानी।
कैसे वही तड़प अनजानी,
गीतों में भर लाऊँ।

कर में यह वीणा ले सुन्दर
तानें तो छेड़ी जीवन भर।
पर यदि तू रीझे न सुरों पर,
निष्फल है जो गाऊँ।

ठाठ भक्ति के भी रच थोड़े
मैंने जग के राग न छोड़े।
तार न यदि तुझसे हैं जोड़े,
गायक व्यर्थ कहाऊँ।
कहाँ वह पीर प्रेम की पाऊँ।

हमारा प्यार

नहीं है नया हमारा प्यार।
पहले से ही बसी हुई थी
तारों में झंकार।

जड़ पाषाण खण्ड के भीतर
छिपी हुई थी प्रतिमा सुन्दर।
मैंने बस निज कर से छूकर,
किया उसे साकार।

शब्दों की चादर के नीचे,
सोयी थी कविता दृग मींचे।
मैंने बस मुँह से पट खींचे,
कुंतल दिये सँवार।

प्राणों के अविदित परिचय में
घुमड़ रहा था प्रेम हृदय में।
मैंने बस बाँधा सुर–लय में,
नयन हुये जब चार।
नहीं है नया हमारा प्यार।।

रचना-संसार
गुलाब खण्डेलवाल का

हिंदी साहित्य के सुपरिचित हस्ताक्षर श्री गुलाब खण्डेलवाल की रचनाधर्मिता का इससे उपयुक्त प्रमाण क्या होगा कि अब तक उनके ३५ काव्य संकलन और दो गद्य नाटक प्रकाशित हो चुके हैं। इन दिनों श्री खण्डेलवाल अमरीका में रहते हुए भी साहित्य साधना कर रहे हैं। प्रस्तुत हैं उनकी पाँच कविताएँ और कुछ गजलें...

तुम्हारी दया

दया यह भी कम थी न
तुम्हारी।
समझा मुझको भी चरणों तक
आने का अधिकारी।
राज्यसभा थी जुड़ी तुम्हारी
गायक एक–एक से भारी।
जब सब ने थी चुप्पी धारी,
आई मेरी बारी।
मैं उनमें क्या शोभा पाता
कुछ उल्टा सीधा था गाता।
जब भी कोई तान उठाता,
हँसती परिषद सारी।

पर आश्चर्य, गीत सुन मेरा
तुमने हाथ पीठ पर फेरा।
पल में लाँघ सभा का घेरा,
उमड़ पड़े नर–नारी।

अपना बानक आप बनाओ

अपना बानक आप बनाओ
मुझको तो बस बीच–बीच में
झलक दिखाते जाओ

नाम–रूप कुछ भी धर लो,
जी चाहे जैसे आओ
पर जब मैं पहिचान न पाऊँ,
धीरे से मुस्काओ

विघ्नों को आने दो जी भर,
कितना भी भटकाओ
पर जब मुझे हारता देखो,
सिर पर हाथ फिराओ

तुम्हें भूल भी जाऊँ मैं पर
तुम मुझको न भुलाओ
हँसकर तुरत भागता आऊँ
जब बाँहें फैलाओ

अपना बानक आप बनाओ
मुझको तो बस बीच–बीच में
झलक दिखाते जाओ।

तुम हो मेरे पास निरंतर
फिर यह अंतर क्या है !

तुम हो मेरे पास निरंतर
फिर यह अंतर क्या है !
जो न मुझे मिलने देता
तुमसे जीवन भर, क्या है !

यद्यपि मन में मुस्काते हो
सम्मुख कभी नहीं आते हो
मुझे निरंतर भटकाते हो
जिस सुषमा के मोहजाल में
बाहर–बाहर, क्या है !

कभी रात के शेष प्रहर में
लगता है, आये तुम घर में
कहो न चाहे कुछ उत्तर में
किंतु स्पर्श–सा लगता जो अंगों में थर–थर,
क्या है ?

एक लक्ष्य है, एक किनारा
कब होता पर मिलन हमारा!
मैं बहता जल हूँ, तुम धारा
प्राणों का संबंध हमारा
कुछ तो है, पर क्या है !

तुम हो मेरे पास निरंतर
फिर यह अंतर क्या है !
जो न मुझे मिलने देता
तुमसे जीवन भर, क्या है !

गज़ल

फिर इस दिल के मनचले की कहानी याद आती है
मुझे फिर आज अपनी नौजवानी याद आती है।

बहुत कुछ कहके भी उससे न कह पाया था प्यार अपना,
तपिश सीने की बस आँखों में लानी याद आती है।

कहा था, कल कहूँगा क्या, न यह कहता तो क्या कहता,
यही सब सोचते रातें बितानी याद आती है।

शरारत की हँसी आँखों में दाबे, नासमझ बनती,
मेरी चुप्पी पे उसकी छेड़खानी याद आती है।

भुला पाता नहीं मैं पोंछना काजल पल पर से,
लटें आवारा उस रुख की हटानी याद आती है।

कभी गाने को कहते ही लजाकर सिर झुका लेना,
गुलाब अब भी किसी की आनाकारी याद आती है।

गज़ल

कभी धड़कनों में है दिल की तू, कभी इस जहान से दूर है
ये कमाल है तेरे हुस्न का कि नजर का मेरी फितूर है।

तू भले ही हाथ न थाम ले कभी मुझको अपना पता तो दे,
कि भटक न जाऊँ मैं राह में तेरा दर अभी बहुत दूर है।

जो ख्याल में भी न आ सके उसे प्यार भी कोई क्या करे,
तू खुदा भले ही रहा करे मुझे नाखुदा पे गरूर है।

इसे देखना भी नहीं था जो तो जलायी थी ये शमा ही क्यों?
मेरे दिल को भा गयी इसकी लौ तो बता ये किसका कसूर है।

जिसे तूने था कभी छू दिया वो गुलाब और गुलाब था,
कहूँ अपने दिल को मगर मैं क्या जो नशे में आज भी चूर है।

मेडिना, ओहायो

स्वादिष्ट व्यंजन : पकाइए और खिलाइए

अक्सर पार्टी के बाद या कभी यूँ ही खाना बच जाता है। इस बचे खाने को, दूसरे दिन खाने के लिए कोई भी तैयार नहीं और इसे फेंकने के लिए हमारा दिल तैयार नहीं, तो क्या किया जाए? जिससे इसे फेंकने का दुख ना हो और नया रूप देकर सबका मन लुभा लिया जाए।

तो लीजिए पेश हैं बचे हुए खाने के नए रूप में व्यंजन :

चावल के कटलेट :

यदि चावल या पुलाव बच गया हो तो .... चावल की आधी मात्रा में चीज़ घिस कर मिला लें। हरी मिर्च, नमक, काली मिर्च स्वादानुसार मिला लें।

एक फ्राइंग पैन में १ चम्मच घी या मक्खन डालकर, जीरा चटका लें, आधा चम्मच हल्दी डालकर चावल का मिश्रण डालकर अच्छी तरह मिला लें। २–३ मिनट आँच पर रखें।

थोड़ा ठंडा होने पर, लम्बे आकार में, छोटे पतले कटलेट बना लें। फ्राइंग पैन मे कम तेल में, तेज आंच में तलें। गरम परोसें।

दाल ढोकली :

अगर मूंग की या अरहर की दाल बच गई हो तो ... दाल में ककड़ी, टमाटर, गाजर, मटर बारीक काटकर डाल दें। गरम मसाला एक चम्मच डाल दें।

इमली या नींबू की खटाई स्वादानुसार डालें। दाल पतली करके गरम करें। अच्छी तरह उबल जाए।

बची रोटी के चौकोर टुकड़े काट कर, दाल में डाल दें। ३–४ उबाल आने दें। ऊपर से घी में राई, जीरा, लाल मिर्च का बघार बनाकर डाल दें। धनिया पत्ती से सजाकर परोसें।

बघारी रोटी :

अगर रोटी, परांठा, पूड़ी, बच जाए तो ... रोटी, पूड़ी, परांठा के छोटे–छोटे टुकड़े कर लें। एक प्याला दही में, टमाटर, ककड़ी, शिमला मिर्च पत्ता गोभी, हरी मिर्च काटकर मिला दें।

नमक, लाल मिर्च, हल्दी, गरम मसाला स्वादानुसार मिला लें। १ चुटकी चीनी डाल दें।

सबको मिलाकर अच्छी तरह फेंट लें। एक कढ़ाई में घी गरम करके, उसमें राई, जीरा, हींग डालें। दही का मिश्रण डालकर लगातार चलाती रहें, वरना दही फट जाएगा।

रोटी का चूरा डालकर एक उबाल दे लें। परोसते वक्त हरा धनिया डालकर नींबू के साथ पेश करें।

सब्जियों के कटलेट :

आलू की सब्जी या मिक्स सब्जी बच जाए तो... मिक्स सब्जी में आलू की सब्जी मिला लें। गाढ़ी–गाढ़ी ही। झोल हो तो हटा दें। और अगर आलू की सब्जी न हो तो उबला आलू चूरा करके मिला दें।

१ चम्मच सूजी, १ चम्मच बेसन व हल्के मसाले डाल दें। अगर फिर भी मिश्रण ढीला हो तो एकाध ब्रेड मिला लें। कटलेट का शेप देकर, तेज आंच में तलें।

स्टफ कटलेट :

अगर व्हाइट सॉस की मैक्रोनी बच जाए तो ... मैक्रोनी में ब्रेडक्रम्स तथा सब्जियाँ (जैसे गाजर, शिमला मिर्च, पत्ता गोभी बारीक कटी हुई) मिला लें।

नमक, टेबेसको, काली मिर्च डाल दें।

आलू उबाल कर कस लें। नमक, काली मिर्च मिला लें। आलू के अंदर मैक्रोनी का मिश्रण भरकर, मनचाहा आकार दे दें। ब्रेड क्रम्स में लपेट कर, तेल में तल लें।

इस तरह थोड़ी–सी सूझ–बूझ व समझदारी से हम अपने बचे खाने का सही सदुपयोग कर सकते हैं।

कल्पना जैन, तोक्यो

मूर्ख विद्वान

बहुत समय पहले, एक छोटे से नगर में, चार आदमी रहते थे। चारों में गहरी दोस्ती थी। उनका अधिकतर समय साथ गुजरता था। उनमें से तीन आदमी बड़े ही विद्वान थे। उन्होंने इतना कुछ सीखा पढ़ा था कि आगे और सीखने के लिए कुछ भी नहीं बचा।

परन्तु इतने पढ़े लिखे होने पर भी उनमें सहजबुद्धि बिल्कुल भी नहीं थी। इन तीनों के विपरीत चौथा आदमी पढ़ने लिखने की ओर जरा भी ध्यान नहीं देता था पर उसमें सहजबुध्दि कूट-कूट कर भरी थी।

एक बार चारों मित्र, एक जगह इकठ्ठा होकर, बातचीत कर रहे थे। उनकी बातचीत का विषय था कि किस प्रकार अपनी पढ़ाई का लाभ उठाकर अपने रहन-सहन को अधिक अच्छा बनाया जाय।

बातचीत के दौरान पहले विद्वान ने कहा, ''हमें दूर-दूर के देशों की यात्रा करके दुनिया के भिन्न-भिन्न लोगों के बारे में जानकारी हासिल करनी चाहिए। हो सकता है कि इस यात्रा में हमें राजाओं और सामन्तों की कृपा प्राप्त हो जाये। तब हम आसानी से मालामाल हो जायेंगे।''

जब बाकी आदमियों ने यात्रा का यह प्रस्ताव मान लिया तब पहला विद्वान कहने लगा, ''हम तीन जने तो सब विद्यायें पढ़े है इसलिए हमारा सफल होना भी निश्चित है। लेकिन इस चौथे का क्या होगा ? यह तो निरा बुद्धू है। इससे कुछ होना तो दूर उल्टे हम पर बोझ बना रहेगा।''

इस पर दूसरे विद्वान ने कहा, ''हमारा हित इसी में है कि इसे घर पर ही छोड़ दिया जाए।''

लेकिन तीसरे विद्वान ने कहा, ''दोस्तों के साथ ऐसा बर्ताव करना उचित नहीं। यह सच है कि इसने पढ़ने-लिखने में कभी ध्यान नहीं दिया पर यह हमारा बचपन का मित्र है। हम इसे छोड़कर नहीं जा सकते।''

फिर उसने चौथे आदमी की ओर मुड़कर कहा, ''मेरे प्यारे दोस्त चलो, तुम भी हमारे साथ चलो। हम जो कुछ भी कमायेंगे उसमें तुम्हारा हिस्सा भी होगा।''

इस तरह आपस में तय करके वे चारों दोस्त साथ-साथ अपनी लम्बी यात्रा पर चल पड़े। चलते-चलते वे एक घने जंगल में जा पहुंचे।

जंगल में, एक स्थान पर, किसी जंगली जानवर की हड्डियां बिखरी पड़ीं थीं। हड्डियों को देखकर एक विद्वान ने कहा, ''यह देखो, यहां किसी जानवर के अवशेष पड़े हैं। यह हमारे ज्ञान को परखने का सुनहरा मौका है। आओ हम इस जानवर को जीवित कर दें।''

इसपर पहले विद्वान ने कहा, ''मैं इसकी हड्डियाँ इक्ट्ठी कर इसका पूरा ढाँचा तैयार कर सकता हूं।'' दूसरा विद्वान बोला, ''मैं इस ढाँचे में चर्म, मांस, मज्जा और रक्त भर सकता हूं।'' तब तीसरे विद्वान ने कहा, ''मैं उसमें प्राण फूंक सकता हूं।''

फिर क्या था ? पहले ने हड्डियों को जमाकर ढांचा तैयार कर दिया, दूसरे ने उसमें चर्म, मांस, मज्जा और रक्त भर दिया और तीसरा उसमें प्राणों का संचार करने आगे बढ़ा।

पर जैसे ही वह अपना कमाल दिखाने वाला था वैसे ही चौथा आदमी चिल्लाकर बोला, ''ठहरो, इसे जीवित न करो, देखते नहीं यह तो शेर है। क्या तुम शेर को जीवित करोगे ?''

इस पर तीसरा विद्वान नाराज होकर बोला, ''मूर्ख, तुम मेरी विद्वता पर सन्देह करते हो ? मैं इसे जीवित करके ही छोड़ूँगा।''

''अगर तुम्हारी यही मर्जी है तो करो,'' चौथे आदमी ने कहा, ''लेकिन दो पल रुक जाओ।'' ऐसा कहकर वह दौड़ता हुआ भागा और एक ऊंचे पेड़ पर चढ़ गया। तभी तीसरे ने शेर को जीवित कर दिया। वह एक भयानक शेर था। जिन्दा होते ही उसने पहले तो गरजना शुरु किया फिर फुर्ती से झपट कर तीनों विद्वानों को जान से मार डाला।

चौथा आदमी चुपचाप पेड़ पर बैठा देखता रहा। जब शेर वहां से चला गया तब वह नीचे उतरा और अपने घर वापस लौट गया।

(पंचतंत्र से)

নিবেদন

নানান অনিশ্চয়তার মধ্যে দিয়েও জাপান ভারতীর বেশ কয়েকটি সংখ্যা প্রকাশিত হোয়েছে। পত্রিকাটি ভালো লেগেছে এ খবরও জানিয়েছেন কিছু কিছু পাঠক। কিন্তু পত্রিকাটিকে সজীব রাখা, বা এর মান উন্নয়ন করার জন্য যে সহযোগিতার প্রয়োজন, তা এখনও পর্যন্ত সম্পূর্ণভাবে পাওয়া যায়নি।

কার্যসূত্রে আমেরিকার একটি ছোট শহরে দিনকতক হল এসেছি। বন্ধুর বাড়িতে গিয়ে চোখে পড়েছে স্থানীয় বাঙালীদের দ্বারা প্রকাশিত পত্রিকার একটি সংখ্যা। বিদ্যাসাগরের জন্মতিথিতে তাঁর প্রতি শ্রদ্ধা জানানোর উদ্দেশ্যে এই বিশেষ সংখ্যাটির আয়োজন। বলাবাহুল্য পত্রিকাটির মান খুবই উন্নত।

সকলের সহযোগিতা থাকলে জাপান ভারতী-কেও সেই স্তরে পৌঁছে দেওয়া সম্ভব। অনেকে প্রশ্ন করেছেন বাংলা বিভাগ এত ছোট কেন? তাঁদেরও সকলকে জবাব দিয়েছি নিয়মিতভাবে লেখা পেলে নিশ্চয়ই আয়তন বাড়ানো সম্ভব। তাই আপনাদের সকলের কাছে এই সবিনয়ে নিবেদন, জাপান ভারতীর জন্য অবিলম্বে যে কোন পছন্দসই বিষয়ের উপর গল্প, কবিতা, প্রবন্ধ ইত্যাদি আমাদের ঠিকানায় পাঠান।

– রঞ্জন গুপ্ত

টোকিয়োতে পূজো

বাঙালীর একান্ত আপন ঋতু শরৎ। শরতের বৃষ্টি ধোওয়া নীল আকাশে অলস তুলো মেঘ, ভোরের সোনামাখা রোদ নিয়ে আসে আনন্দময়ীর আগমন বার্তা। মাঠে মাঠে হাওয়ায় দোলা কাশ ফুলের শুভ্রতা আর শিশিরে ভেজা ঘাসে ঝরা শিউলির গন্ধ সাত সমুদ্দুর পেরিয়ে এসে ছুঁয়ে যায় বাঙালীর মনকে। প্রবাসী মন উদাস হয়ে যায় সেই আনন্দলগ্নের খবরে। পূজো ভাবতেই এক অজানা ব্যথায় টনটনিয়ে ওঠে বুক। ফেলে আসা স্মৃতিকে আঁকড়ে ধরে তাই দেশে দেশে প্রবাসী বাঙালী মেতে ওঠে শারদোৎসবের আনন্দে। জাপানের বাঙালীও তার ব্যতিক্রম নয়।

টোকিয়োতে পূজো শুরু হয়েছে মাত্র বছর ছয় আগে। অন্যান্য দেশের মত লোকবল বা অর্থবল কোনটাই নেই এখানে। নেই স্থায়ী বাঙালীর উল্লেখযোগ্য উপস্থিতি। পূজোর সবটুকু নির্ভর করে নানান কাজে অল্প কয়েক বছরের মেয়াদে আসা বাঙালীদের উপরে। স্বভাবতই সে সংখ্যা জোয়ার ভাঁটার মতনই ওঠা-নামা করে। গত বছর দুই ধরে বেশ কয়েকটি পরিবার ফিরে যাওয়ায় এখানকার ছোট বাঙালী সম্প্রদায় আরও ছোট হয়ে গেছে। তার প্রত্যক্ষ্য ফল হিসাবে এবার পূজোর সময় প্রচন্ড চাপের মুখে পড়তে হয়েছে উদ্যোক্তাদের। কাজের লোক কম অথচ অতিথি সংখ্যা ক্রমবর্ধমান। আর তা সামাল দিতে হিমসীম খেয়েছে পূজো কমিটি। তাতে অবশ্য আনন্দের কোন ঘাটতি হয়নি পূজোতে।

এবছর পূজো হয়েছে দুদিন - ৩০শে সেপ্টেম্বর (ষষ্ঠী) আর ১-লা অক্টোবর (৭মী)। নানান সমস্যায় কোনবারই পূজোর দিন পূজো হতে পারেনি এপর্যন্ত। তাই সকলের আনন্দ দ্বিগুণ ছিল এবছর। প্রকৃতিও সদয় ছিলেন। পূজো তাড়াতাড়ি পড়ায় ঠান্ডাও তেমন ছিলনা। প্রথম দিনটি যায় প্রতিমা আনা, সাজানো, পূজোর যাবতীয় গোছগাছ আর অন্যান্য কাজ সারতে। তারই মধ্যে তৈরী হয়ে যায় পূজোর পরিবেশ।

পরদিন ভোর রাত্রে উঠে পড়লাম। উত্তেজনায়, দুশ্চিন্তায় সারারাত ঘুম হয়নি। বারান্দায় দাঁড়িয়ে দেখি ভোর হচ্ছে। শান্ত, স্তব্ধ একটা মুহূর্ত। দেখতে দেখতে সোনালী রোদ্দুরে ভেসে গেল চারদিক। আনন্দময়ীকে আবাহন করতে প্রকৃতিও যেন যোগ দিলেন আমাদের সঙ্গে। তাড়াতাড়ি স্নান সেরে, দরকারি জিনিষপত্রের লটবহর নিয়ে ছুটলাম পূজোর হলে। আমরা একদল লেগে গেলাম পূজোর যোগাড়ে। অন্য একটি দল ছুটলো রান্নাঘরে খাবারের ব্যবস্থা করতে। পূজো তো উপলক্ষ্য-খাওয়াটাই যে আসল, তাই তার দায়িত্বটাও কঠিন। বাকিরা ব্যস্ত হয়ে পড়লেন অতিথি অভ্যর্থনা ও অন্যান্য গুরুত্বপূর্ন কাজে। ততক্ষনে মাইকে বাজছে ঢাকের টেপ। বাচ্চাদের হুটোপাটি আর হৈ-চৈ তে আসর সরগরম। পূজো শুরু হল সাড়ে দশটা নাগাদ। এখানকার পূজো প্রতিবছরই সুন্দর হয় শ্রী সুদেব চট্টোপাধ্যায়ের পৌরহিত্যে - এবছরও হয়েছে। মন্ত্রপাঠ, ফুল-চন্দন-ধূপের গন্ধ, প্রদীপের আলো, শঙ্খ-ঘন্টা

-উলুধ্বনিতে তৈরী হোল শূচি-স্নিগ্ধ এবং স্বপ্নময় জগতের। আনমনা মন বারবার ছুটে যায় স্মৃতির ছায়াপথ ধরে ফেলে আসা সেই দিনগুলিতে।

পূজোর শেষে অঞ্জলি হল তিন দফায়। ওদিকে বারোটা বাজতেই খাবার দেওয়া শুরু হয়ে গেল। তখনও চন্ডিপাঠ হচ্ছে পূজোর জায়গায়। হলে ততক্ষনে তিল ধারণের জায়গা নেই। অবাঙালীদের উপস্থিতি অন্যান্যবারের তুলনায় অনেক বেশী ছিল। জাপানী সহ বিদেশীরাও ছিলেন বেশ কিছু। এবছর বিশেষ অতিথি হিসেবে উপস্থিত ছিলেন সস্ত্রীক ভারতীয় রাষ্ট্রদূত শ্রী কুলদীপ সাহদেব ও বন্ধুবান্ধব সহ WBIDC -র chairman শ্রী সোমনাথ চট্টোপাধ্যায়।

ঠিক আড়াইটের সময় শুরু হয় বিচিত্রানুষ্ঠান। বেদগান ও দুর্গাবন্দনা দিয়ে অনুষ্ঠানের সুন্দর উদ্বোধন। এর পর দক্ষিণ ভারতীয় ভক্তিমূলক গান, হিন্দি ভজন, হিন্দি আর ওড়িয়া লঘু সঙ্গীত, নাচ, জাপানী বাদ্যযন্ত্র সামিসেন বাজন ইত্যাদি পরিবেশন করা হয়। বিরতির আগে শেষ অনুষ্ঠান ছিল লোকসঙ্গীত নিয়ে নাচ গানের ছোট্ট একটি বাংলা অনুষ্ঠান। এতে অংশ গ্রহন করেন - অদিতি দত্ত, চান্দ্রেয়ী দাস, দেবযানী নিয়োগী, পাঞ্চালী মিত্র, রীতা কর, সুস্মিতা পাল, সোমা বিশ্বাস, মঞ্জুলিকা হানারি, অলর্ক কুন্ডু দেবাশীষ দাস, জয়ন্ত দত্ত, রঞ্জন গুপ্ত আর বিবেক দাস। নাচে ছিলেন - নিবেদিতা ঘোষ দস্তিদার, সোহিনী কর, চান্দ্রেয়ী দাস, রতি শরণ আর নিবেদিতা দাস। তবলা সঙ্গতে - অতুল দত্ত। বাংলা অনুষ্ঠানের পরিচালনা করেছিলেন রীতা কর।

বিরতির পর শরদিন্দু বন্দোপাধ্যায়ের 'পঞ্চভূত' গল্পের নাট্যরূপ মঞ্চস্থ হয়। অভিনয়ে ছিলেন - কুমকুম মুখার্জি, মীরা ব্যানার্জী, সব্যসাচী রায়, চিত্ত দাস আর সৌরভ ব্যানার্জী। নাট্যরূপ আর পরিচালনায় - সীতা রায়।

পুরো অনুষ্ঠানটির ঘোষনায় ছিলেন পার্থ ঘোষ। নাচে-গানে-হাসির নাটকে জমে ওঠে আসর। জাপানী আর অবাঙালীদের সহযোগিতায় বৈচিত্রে ভরা উপভোগ্য একটি অনুষ্ঠান সম্ভব হয়।

সন্ধে ছ'টায় শুরু হয় আরতি। তারপর প্রতিমা বরণ, সিঁদুর খেলার হুটোপাটি। সব শেষে রাতের খাওয়া। এরপরই আবার ছুটোছুটি পড়ে যায় হল পরিষ্কার করে তাকে ঠিকমতন গুছিয়ে রাখতে আর নিজেদের জিনিষপত্র বাঁধাছাঁদা করতে। সব শেষে যখন সকলে বেরিয়ে এলাম তখন প্রায় ন'টা বাজে।

সকলের সমবেত চেষ্টা আর সহযোগিতায় সুষ্ঠুভাবে সুন্দরভাবে এবারও পূজো হতে পেরেছে। যাঁদের নাম এর আগে উল্লেখ করা হয়েছে তাঁরা তো এর পিছনে ছিলেনই, এছাড়া যাঁরা নেপথ্যে নীরবে কাজ করে সকলকে সাহায্য করে গেছেন তাঁরা হলেন - করবী মুখার্জী, রুমা গুপ্ত, জয়শ্রী চ্যাটার্জী, প্রতিমা ঘোষ দস্তিদার, মেগুমী পাল, সুমনা কুন্ডু, শ্যামল কর, উৎপল পাল, জয় ভৌমিক, গৌতম বিশ্বাস, জ্যোতির্ময় রায়, তন্ময় ব্যানার্জী, মণিশঙ্কর পাল, সিদ্ধার্থ কর, অর্ণব গুপ্ত আর অবশ্যই অঞ্জন মিত্র। 'মোতি' রেস্টুরেন্ট গত কয়েক বছর ধরে ভোগের জিনিষপত্র দিয়ে সাহায্য করছেন। এবছর স্বামী মেধাসানন্দজীও চাল দিয়েছেন ভোগের জন্য। এদের কাছে আমরা কৃতজ্ঞ - 'দোওমো আরিগাতো'।

- মঞ্জুলিকা হানারি, তোকিও

একটা পুতুলের গল্প

ঘোষ পাড়ার ভটচাষ্যি মশায়ের চার বছরের একমাত্র মেয়ে পুতুল পাড়ার সকলেরই খুব আদরের। পুতুলের সর্বক্ষণের সঙ্গী একটি ছোট্ট সাদা কুকুরছানা। নাম তার হামি। পুতুলের মা হপ্তা দুয়েক হল মানসিক হাসপাতাল থেকে বাড়ি ফিরেছেন। বাড়িতে তাই এখন আনন্দের জোয়ার। তার ওপর পুতুলের বাবা আরও দুটো ছোট্ট ছাগলের বাচ্চা বাড়িতে নিয়ে এসেছেন। পুতুলকে আর পায় কে! মহানন্দে সমানে ওদের গাছের পাতা খাইয়ে চলেছে। ভটচাষ্যি মশায়ের মানত ছিল, পুতুলের মা ভাল হয়ে গেলে বাড়িতে কালীপূজো করে জোড়া পাঁঠা বলি দেবেন। বেচারী পুতুল ঐ কালীপূজোর দিনই সকালে বাবার সঙ্গে হাত মিলিয়ে ছাগল দুটোকে স্নান করালো। কিন্তু হায় পোড়া কপাল! দিনের আলো ফুরাতে না ফুরাতেই তার নিজের বাবাকে মহা পাষন্ডের মত খাঁড়া দিয়ে দুটো ছাগলেরই মাথা কেটে

ফেলতে দেখলো। পুতুল সে রাতে না খেয়ে, কেঁদে কেঁদে, ফুঁপিয়ে, অবশেষে ঘুমিয়ে পড়লো। প্রবল জ্বরের মধ্যে দুঃস্বপ্ন দেখলো তার বাবা খাঁড়া হাতে হামিকেও কাটতে যাচ্ছে। পুতুলের আর্তনাদে ওর মা ঘুম থেকে উঠে দেখলেন পাশে পুতুলের বাবা নেই। দরজা ঠেলতেই চোখে পড়লো পুতুলের বাবা রক্ত মাখা মেঝেতে লুটিয়ে পড়ে আছে। আর একটু দূরেই হামির লাল সাদা দুখন্ড দেহটা পড়ে আছে। পাড়ার সকলে ছুটে এসে পুতুলের বাবাকে হাসপাতালে নিয়ে গেল। জ্ঞান ফিরলে জানা গেল ভটচায্যি মশায় কালী মায়ের স্বপ্নাদেশে হামির বলি দিয়েছেন। কারণ সুধার নেশা একটু বেশী মাত্রায় হওয়ার দরুন টাল সামলাতে না পেরে খাঁড়ায় হড়কে পড়ে পা কেটে যায়। রক্তক্ষরণে জ্ঞান হারিয়েছিলেন। পাড়ার সকলে বললো মার আশির্বাদে ভাল হয়ে ফিরলেন। কিন্তু পুতুল দিন কয়েকের মধ্যেই মানসিক ভারসাম্য হারানোর দরুন হাসপাতালের নিরাপদ আশ্রয়ে দিন কাটাতে লাগলো।

- জয়ন্ত দত্ত, ইচিকাওয়া

ভারতে এক মাস

গত অগাষ্ট মাসটা পুরো এক মাস কাটিয়ে এলাম দেশে। দু বছর পর দেশে যাওয়া। এ দু বছর জাপানের খবরের কাগজে অনেক লেখালেখি হয়েছে ভারত সরকারের নতুন অর্থনীতি নিয়ে। শুধু জাপানের কাগজেই নয়, ব্রিটিশ, আমেরিকান ও হংকং-এর কাগজেও হয়েছে এ সম্পর্কে অনেক আলোচনা। সব জায়গায় একই গবেষণা - আসেয়ান আর চীনের পর এবার ভারতের পালা। তাই ভেবেছিলাম দেখব নব জাগরণের হৃদস্পন্দন। তবে আঞ্চলিক নির্বাচনে কংগ্রেসের পরাজয়, অর্জুন সিংএর বিদ্রোহ আর এনরনের বিতর্ক - চারিদিকে আসন্ন অনিশ্চয়তার পূর্বাভাষ।

ভারতে বিদেশী পুঁজী বিনিয়োগ প্রোৎসাহন সম্পর্কে নরসিংহ রাও আর মনমোহন সিংয়ের মুক্তম্বার নীতি কতখানি ফলপ্রসু হয়েছে? তা অতি সহজ উপায়ে নির্ধারণ করা সম্ভব। বিদেশী শিল্প সংস্থার প্রতিশ্রুত বিনিয়োগের কত অংশ বাস্তবে রূপায়িত হয়েছে তা থেকে ভারতে বিদেশী পুঁজী বিনিয়োগের পরিবেশ সমন্ধে একটা ছবি আমরা পেতে পারি অতি সহজে। এই দৃষ্টিকোণ থেকে দেখলে ব্যাপারটা সত্যি নৈরাশ্যজনক।

দেশে ফিরে প্রথম দিনেই খবরের কাগজ খুলে এর একটা উত্তর পেলাম। সমস্ত কাগজ জুড়ে রয়েছে রাজনীতিকদের বিলাপ: নরসিংহ রাও-মনমোহন সিং দেশকে বিকিয়ে দিচ্ছে বিদেশী পুঁজীর কাছে। অথচ, যা অল্প স্বল্প বিদেশী শিল্প এসেছে তাতেই ভারতের রপ্তানি অন্ততঃ এতটা বেড়ে গেছে যে ভারত সরকারকে আপাততঃ আর বিদেশী মুদ্রা নিয়ে মাথা ঘামাতে হচ্ছে না - এ ব্যাপারটার কোন উল্লেখই নেই কোথাও।

পাশেই চীন। দেশটা এখন বিদেশী পুঁজির স্বর্গ বললেও অত্যুক্তি হবে না। তাতে তো কাউকে বলতে শুনি না যে চীন নিজেকে বিকিয়ে দিচ্ছে! বিদেশী শিল্প সংস্থার স্থাপিত কল-কারখানাতে সস্তায় মাল তৈরী করে এবং তা রপ্তানি করে বিদেশীরা অনেক লাভ করছে ঠিকই, তবে তা সত্বেও যা রেখে যাচ্ছে তাতেই চীনের এত সমৃধ্বি। নীস এবং আসেয়ানের ক্ষেত্রেও এই ইতিহাসই আমরা দেখেছি। এইতো সেদিনও মালয়েসিয়ার মহাথিরের এক হুমকিতে ব্রিটেনের নেতারা কুয়ালালামপুরে ছুটে এসেছে মিটমাটের জন্য।

আমাদেরই আশেপাশের দেশগুলো এগিয়ে চলেছে প্রথম বিশ্বকে ছোঁয়ার জন্য। মহাথির অনেক আগেই ঘোষণা করেছে যে ২০১০ সালে মালয়েসিয়া প্রথম বিশ্বের ক্লাবে আনুষ্ঠানিক ভাবে যোগদান করবে। থাইল্যান্ড ভারতে অন্যতম পুঁজী বিনিয়োগকারী। আর্থিক মুক্তদ্বার নীতিই এসব দেশে সমৃধ্বি এনেছে। এ সবের কোন উল্লেখ নেই কোনও খবরের কাগজে। এ সব ব্যাপার যে আলোচনার যোগ্য এই চেতনাও নেই ভারতের সাংবাদিকতায়। তার ফলে সাধারণ লোকও আশেপাশে যে বিরাট পরিবর্তন ঘটছে তা সমন্ধে একেবারেই উদাসীন। দেশের রাজনীতিকদের মধ্যে খুবই অল্পসংখক নেতারা ছাড়া সবাই নরসিংহ রাও - মনমোহন সিংএর নতুন আর্থিক বিকাশের নীতিকে তারস্বরে নিন্দা

করে চলেছে। অবশ্য অর্থনীতিবিদদের অভিমতের কোন মূল্যই নেই এই বিতর্কে। বিদেশী শিল্পের সাহায্য ছাড়া বিদেশের বাজারে বিক্রয়যোগ্য পণ্য তৈরীর ক্ষমতা নেই ভারতীয় শিল্পের। ভোর হলেই মধ্যপ্রাচ্যের দেশগুলিকে দিতে হবে তেলের দাম, তাও ডলারে। এই সাধারণ তথ্যগুলি পর্যন্ত ভুলেও ভেবে দেখেনা এই সব ক্ষমতালোভী রাজনীতিকের দল। ভারত যে এই পৃথিবীরই একটা অংশ, পৃথিবীর সবার সঙ্গে তাল মিলিয়ে আমাদেরও চলতে হবে নিজেদেরই বেঁচে থাকার তাগিদে - এ কথাটা এরা একবারও ভেবে দেখেছে কি? আর্থিক মুক্তম্বার নীতিকে বিফল করার জন্য এদের আচরণ ও প্রচেষ্টাই নিরুৎসাহ করছে বিদেশীদের ভারতে পূঁজী বিনিয়োগ করতে। আগামী নির্বাচনে ভারতের সাধারণ জনগণ এদেরদ্বারা কতখানি প্রভাবিত হবে তার উপর নির্ভর করছে ভারতের ভবিষ্যত।

- সরোজ কুমার চৌধুরী, তোয়োতা

আলুর পিৎসা

ভাতের সঙ্গে গরম আলু সেদ্ধ, অথবা ভাজা ঘি বা মাখন দিয়ে খেতে সবাই ভালবাসেন। আর এর সঙ্গে যদি একটা কাঁচালঙ্কা থাকে তাহলে তো কথাই নেই। কিন্তু আজকাল স্বাস্থ্য সচেতন সকলেই এই উপাদেয় খাবারটির প্রতি অনীহা প্রকাশ করছেন। তবে জানেন নিশ্চয়ই যে মেদ বৃদ্ধির ক্ষেত্রে আলুর অবদান সামান্যই। আলুর স্বাদ বাড়াতে আমরা যে সব উপকরণ ব্যবহার করি সেগুলোই মেদবর্ধক। জানেন কী যে ৭৫টি আলু খেলে তবে ১ কিলো ওজন বৃদ্ধি পায়? আলুর পুষ্টিগত মান সম্পর্কে আমরা যথেষ্ট সচেতন নই। একটি মাঝারি সাইজের আলু আপনার সারাদিনের ভিটামিন 'সি'-এর প্রয়োজনীয়তা মেটায়। এছাড়া নানা ভিটামিন ও mineral-এর সাথে আছে এমন পরিমানের fibre যা কিনা কেবল মাত্র একটি আটার রুটিতেই পাবেন। তাহলে আসুন আজকে আলু দিয়েই তৈরী করা যাক একটি নতুন পদ - আলুর পিৎসা।

উপকরণ:

- চারটি বড় সাইজের আলু,
- এক কাপ সেদ্ধ করা হাড়বিহীন মুরগীর মাংস,
- এক কাপ কুরোনো (grated) cheese,
- এক চামচ লঙ্কার গুঁড়ো,
- দুটি capsicum,
- ১/২ কাপ মাশরুম,
- চার চামচ টোমাটো সস্, ও
- আধখানা পেঁয়াজ - গোল করে কাটা।

প্রস্তুত করবার প্রণালী:

আলুগুলি সেদ্ধ করবেন এমনভাবে যেন বেশী নরম না হয়ে যায়। এবার আলুগুলি একটু মোটা করে লম্বালম্বি কাটুন, ও ওভেন-প্রুফ পাত্রে সাজিয়ে নিন। টোমাটো সস্টা ভালোভাবে আলুর উপরে মাখিয়ে দিন। এর উপরে সাজান গোল করে কাটা পেঁয়াজ, capsicum, মাশরুম ও মাংসের টুকরো। সবার শেষে উপরে ছড়িয়ে দিন কুরোনো cheese ও লঙ্কার গুঁড়ো।

এবার মাইক্রোওয়েভ অথবা সাধারণ ওভেনে গরম করুন যতক্ষন না cheese-টা গলে যায়। গরম গরম পরিবেশন করুন।

- রীতা কর, ইয়োকোহামা

খাদক - সেকাল

(১)

সেদিনও রসনা ছিল না শৃঙ্খলিত,
ঋণ করে লোক সেবন করত ঘৃত
'খাওয়ার জন্য বাঁচ' - এই ছিল নীতি -
অপিচ ছিল না হঠাৎ মরার ভীতি।
ঈর্ষায় মরি তাদের স্মরণ ক'রে,
যারা সেই যুগে খেয়ে গেছে প্রাণ ভ'রে।
তুষার ধবল চিকন চালের ভাতে
পাহাড় উঁচিয়ে সকাল বিকাল পাতে
তাল ঠুকে তারা প্রথম পড়ত ঝুঁকে
কাসন্দি ঢালা শ্যামল শাকের বুকে।
তার পরপরই লেবু সুরভিত ডালে
ভাজাভুজি সহ শিশু লঙ্কার ঝালে
শিরহিত ক'রে ঝিমায়িত জিহ্বাকে
চিন্তা করত এবার ধরব কাকে:
চটুকে ছেঁচকি? সাবেকি পোস্ত বাটা?
বাটি-চচ্চড়ি-শোভন মাছের কাঁটা?
অথবা সাজানো রেকাবিতে সারি সারি
সরষে-ঈলিশ, রুই-ভেটকির কারি?
কিংবা অদূরে চকিতে হৃদয়হরা
কব্জি-ডুবানো বাটিতে মাংস ভরা?
লাজুক চাটনি, সুবিচার করে তারও
মুখে তোলা হত সন্দেশ গুটি বারো।
সবার শেষে সঘন নিবিড় ক্ষীরে
আধশোওয়া কটি মর্তমানকে ঘিরে
বিরাজ করত, সুড়সুড়ি দিয়ে প্রাণে,
স্নেহময়ী সুধা, পাটালি-জড়িত ঘ্রাণে।

(২)

ভেবোনা যে এই খেয়ে যাওয়া প্রাণপনে
সীমায়িত ছিল শুধুই গৃহাঙ্গনে।
দূর থেকে দূরে বিপুলা এ-পৃথিবীতে
এরা ছুটে গেছে নবনব স্বাদ নিতে।
আরও খোরোনা যে কৌলীনের খোঁজে
এরা পাঁচ-তারা হোটেলেই ছিল মজে।
সুখাদ্য হলে প্রশ্ন করেনি তারা
কেবা বুর্জোয়া, প্রলেতেরিয়েত কারা।
খেয়েছে যেমনই, পাকড়িয়ে ছুরি কাঁটা,
স্টেকের সঙ্গে আলু ও বিলিতি ডাঁটা,
অথবা তবকে আবৃত বিরিয়ানি
সাথে পার্ষদ দোপেঁয়াজা খানদানি,
কিংবা চীনের ভর্জিত ভাতে ঢেলে
অম্ল মধুর চিংড়ি সুযোগ পেলে,
কোরিয় 'খিমচি'*, আমিষ-সালাড রুশী
কাঁচা মাছ-ভাতে হৃষ্ট জাপানী সুশী,
তেমনই সান্ধ্য লেকের ফুচকা মুড়ি
পাওভাজি দোসা কবরেজি ডালপুরি,
সিঙাড়া, কচুরি, পান্তুয়া, প্রাণহরা,
প্রভাতী জিলিপি, দুপুরে তালের বড়া
আর গোধূলিতে কাগজের খাপে আঁটা,
পরোটা জড়ানো শূল্যপক্ক পাঁঠা।

(৩)

বলা বাহুল্য, তবু যোগ করি শেষে
এদের জীবনে ভোজ্যের আশ্লেষে
ব্যস্ত ছিল যা, তা ছিল তৃপ্তি, তথা
চির দ্যুতিময় সুখদ অজ্ঞানতা।
ডায়েটের চাপে জীর্ণ ক্লিষ্ট স্নায়ু
লাভ না করায়, না হয়েই দীর্ঘায়ু,
জেনে গেছে এরা যা লেখা কবিরই হাতে:
জেনো বাসনার সেরা বাসা রসনা'-তে।

- কল্যাণ দাশগুপ্ত, ওহায়ো

* কোরিয়ায় বহুভোজ্য চৈনিক